अषाढ़ मास, शुक्ल पक्ष 20 वर्ष, अंक 241 पृष्ठ 8 मूल्य 1.00

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज से प्रकाशित

www.akhandbharatsandesh.net

नगर संस्करण प्रयागराज | गुरूवार 26 अगस्त 2021 | विश्व निर्माण एवं मानव विकास को द्रुतगति प्रदान करने हेतु क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान आश्रम की अनुपम भेंट

क्रियायोग संदेश

स्थायी सुख, शान्ति व निर्भय वातावरण के लिए "क्रियायोग अभ्यास करें" सत्य की अनुभूति में सभी प्रकार के क्लेश हमेशा के लिए दूर हो जाते हैं। अध्यात्मिक वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया है कि क्रियायोग के द्वारा हम सत्य से जुड़ जाते हैं। ज्ञान, शक्ति, शान्ति, आनन्द, नाम-यश, धन आदि के लिए मनुष्य को दर-दर भटकना पड़ता है, और प्राप्त न होने पर मनुष्य में हिंसक प्रवृत्ति प्रकट होती है। क्रियायोग में भक्ति दृढ़ होने पर ज्ञान, शक्ति, शान्ति,आनन्द, धन आदि सब कुछ स्वयं मनुष्य के पास आ जाते हैं।

क्रियायोग प्राचीनतम् एवं नित्य नवीन पूर्ण विज्ञान है। ईश्वरीय नियमों के अनुसार कलिकाल में क्रियायोग का ज्ञान विलुप्त हो गया। आरोही द्वापर युग के आते ही मृत्युंजय अमर गुरु श्री महावतार बाबा जी द्वारा क्रियायोग को पुनर्जीवित कर पुनः परिष्कृत किया गया। उन्नीसवीं शताब्दी में महावतार बाबाजी ने क्रियायोग को लाहिड़ी महाशय जी के माध्यम से मानवजाति को दिया। क्रियायोग ही सनातन धर्म में वर्णित यज्ञ है। क्रियायोग ही वेदपाठ है। क्रियायोग अभ्यास से मनुष्य को अपने वास्तविक स्वरूप "अहंब्रह्मास्मि" की अनुभूति एक ही जन्म में सम्भव है।

स्वामी श्री योगी सत्यम्

क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान संस्थान

प्रयागराज

10 मिनट का अभ्यास 20 वर्ष का विकास

भारत में कभी ना खत्म होने वाली महामारी बन सकता है कोरोना वायरस

नई दिल्ली, (एजेंसी)। विश्व स्वास्थ्य संगठन(डब्ल्यूएओ) की मुख्य वैज्ञानिक डाक्टर सौम्या स्वामीनाथन ने कहा है कि भारत कोरोना वायरस महामारी की एंडेमिक(हिंसम्) स्टेज की ओ बढ़ रहा है। मीडिया रिपोर्टों के मुताबिक, उन्होंने कहा कि भारत में कोविड-19 महामारी स्थानिकता(एंडेमिक) के चरण में प्रवेश कर रही है, जहां निम्न या मध्यम स्तर का संक्रमण जारी है। कोई बीमारी स्थानिक अवस्था में तब मानी जाती है जब कोई आबादी, वायरस के साथ रहना सीख जाती है। यह महामारी स्टेज से बहुत अलग है, जब वायरस एक आबादी में फैल जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन

की चीफ साइंटिस्ट सौम्या विश्वनाथन का कहना है कि भारत कोविड-19 के एंडेमिक स्टेज में पहुंच सकता है। इसके साथ ही उन्होंने कहा कि उतार और चढ़ाव के साथ भारत के अलग-अलग हिस्सों में कोविड केस नजर आएंगे।इस समय देश में कोरोना महामारी की दूसरी लहर का प्रकोप अब कम हुआ है। फिलहाल हर रोज 30-40 हजार के बीच कोरोना मामले सामने आ रहे हैं और लगभग 500-600 लोगों की कोरोना से प्रतिदिन मौत हो रही है।

कोरोना ने फिर बढ़ाई चिंता, एक दिन में 648 की गई जान

केरल में 31,445 नए मामले, महाराष्ट्र में भी बिगड़े हालात

नई दिल्ली, **(एजेंसी)।** कोरोना महामारी ने एक बार फिर चिंता बढ़ा दी है। संक्रमण के नए मामलों में अचानक एक दिन में 12 हजार से ज्यादा वृद्धि हुई है और पिछले चौबीस घंटे में 37 हजार से ज्यादा केस पाए गए हैं। ओणम के बाद केरल में भी हालात और खराब हो गए हैं और राज्य में 31,445 मरीज मिले हैं। केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की तरफ से बुधवार सुबह आठ बजे अपडेट किए गए आंकड़ों के मुताबिक पिछले एक दिन में 648 लोगों की मौत हुई है जो एक दिन पहले के 354 के मुकाबले लगभग दोगुना है। इनमें से 288 मौतें महाराष्ट्र और 215 केरल में हुई हैं।

बक्सर में चिनूक की इमरजेंसी लैंडिंग के बाद अब बाड़मेर में मिग-21 विमान क्रैश

नई दिल्ली (एजेंसी)। राजस्थान के बाड़मेर में बुधवार को भारतीय वायु सेना का मिग-21 बाइसन फाइटर जेट क्रैश हो गया है। घटना में पायलट सुरक्षित है। बताया जा रहा है कि यह हादसा ट्रेनिंग के दौरान हुआ है। राहत की बात रही है कि यह विमान किसी रिहायशी इलाके में नहीं गिरा। विमान के क्रैश होने के बाद उसमें भीषण आग लग गई। विमान क्रैश होने की मौके पर भारी संख्या में आसपास के लोग इकट्ठा हो गए। बता दें कि इससे पहले मई महीने में पंजाब के मोगा जिले में वायु सेना का एक मिग-21 विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। इस घटना में भारतीय वायु सेना (आईएएफ) के एक पायलट की मौत हो गई थी। अधिकारियों ने बताया था कि उस समय विमान नियमित प्रशिक्षण के

लिए उड़ान भर रहा था, तभी वो हादसे का शिकार हो गया।

दूसरी ओर बिहार के बक्सर में बुधवार की शाम भारतीय वायुसैनिकों के साथ बड़ा हादसा टल गया। वायुसेना के 20 से अधिक अधिकारियों और कर्मचारियों को लेकर जा रहे अत्याधुनिक चिनूक हेलीकॉप्टर की यहां के मानिकपुर गांव में इमरजेंसी लैंडिंग करानी पड़ी। एक स्कूल के पास खेत में लैंडिंग के बाद मिट्टी गिली होने के कारण हेलीकॉप्टर के पहिये भी धंस गए। बताया जा रहा है कि हेलीकॉप्टर ने प्रयागराज से उड़ान भरी थी। इसे बिहटा जाना था। इसी दौरान बक्सर में अचानक हेलीकॉप्टर के पंखों से चिंगारी निकलने लगी। इससे हेलीकॉप्टर से आवाज भी काफी तेज आने लगी। इसी बीच ग्रामीणों ने देखा कि डगमगाते हुए हेलीकॉप्टर नीचे आने लगा। इसके बाद मानिकपुर गांव में इसे उतरते देखा।

अफगान में असर दिखाने लगा पाक, भारतीय मिशन पर कराया हमला वीजा और पासपोर्ट लूट लिए

नई दिल्ली (एजेंसी)। अफगानिस्तान से लोगों को भारत लाने में जुटे एक भारतीय मिशन के कार्यालय पर कुछ उर्दू भाषी लोगों के हमला करने की खबर है। खबर यह भी है कि इन लोगों ने उस काउंटर पर हमला किया जहां भारतीय वीजा दिया जा रहा था और हमलावरों ने भारतीय वीजा के साथ अनगिनत पासपोर्ट भी लूट लिए हैं। इसके बाद से ही अब भारतीय सुरक्षा एजेंसियां अलर्ट पर हैं क्योंकि सबसे बड़ा खतरा यह है कि इन वीजा का भविष्य में आतंकी गलत इस्तेमाल कर सकते हैं। एक जानकारी के मुताबिक, यह हमला 15 अगस्त को हुआ, जिस जिन तालिबान ने अफगानिस्तान पर कब्जे का ऐलान किया था। इस मामले से जुड़े एक सूत्र ने बताया कि भारतीय इमिग्रेशन एजेंसियां इस घटना के बाद से

अलर्ट हैं क्योंकि भविष्य में इन दस्तावेजों का इस्तेमाल आतंकवादी फर्जी पासपोर्ट बनवाने के लिए कर सकते हैं। हालांकि, यह अभी तक पता नहीं लग सका है कि इस हमले के पीछे किस संगठन का हाथ था लेकिन शक की सूई पाकिस्तान की ओर जा रही है क्योंकि हमला करने वाले उर्दू बोल रहे थे। काबुल में एक सूत्र ने बताया, 'इसकी प्रबल आशंका है कि भारतीय वीजा के साथ अफगान पासपोर्ट का इस्तेमाल आतंकवादी कर सकते हैं।' हालांकि, सुरक्षा एजेंसियां इस घटना को लेकर चुप्पी साधे हुए हैं। काबुल में मौजूद कुछ प्रत्यक्षदर्शियों के मुताबिक, तालिबान के कब्जे के हफ्ते भर बाद ही कई संदिग्ध समूहों का संचालन काबुल से शुरू हो गया है।

तालिबानी खतरे से कैसे निपटेगा भारत, सीडीएस बिपिन रावत ने बताया, कहा- प्लान है तैयार

नई दिल्ली (एजेंसी)। चीफ ऑफ डिफेंस स्टाफ (सीडीएस) जनरल बिपिन रावत ने बुधवार को कहा कि तालिबान के नियंत्रण वाले अफगानिस्तान से किसी भी संभावित आतंकवादी गतिविधि के भारत की तरफ आने पर सख्ती से निपटा जाएगा। उन्होंने इसके साथ ही सुझाव दिया कि 'क्वाड राष्ट्रों' को आतंकवाद के खिलाफ वैश्विक युद्ध में सहयोग बढ़ाना चाहिए। सीडीएस ने ये बातें ऐसे समय पर कही हैं जब अंदेशा जताया जा रहा है कि तालिबानी शासन वाले अफगानिस्तान से लश्कर-ए-तैयबा और जैश-ए-मोहम्मद जैसे आतंकी संगठनों की गतिविधियां बढ़ सकती हैं, जो पाकिस्तान के इशारे पर भारत को निशाना बनाती हैं। जनरल रावत ने कहा कि अफगानिस्तान पर

तालिबान के कब्जे का भारत को अंदेशा था लेकिन जितनी तेजी से वहां घटनाक्रम हुआ, वह चौंकाने वाला है। उन्होंने कहा कि संगठन (तालिबान) बीते 20 साल में भी नहीं बदला है।

वह ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन (ओआरएफ) द्वारा आयोजित एक कार्यक्रम को अमेरिका की हिंद-प्रशांत कमान के कमांडर एडमिरल जॉन एक्विलिनो के साथ संबोधित कर रहे थे। एडमिरल एक्विलिनो ने अपनी टिप्पणियों में चीन के आक्रामक व्यवहार को लेकर भारत के सामने आने वाली चुनौतियों का जिक्र किया।

खासकर "वास्तविक नियंत्रण रेखा पर संप्रभुता" के साथ ही दक्षिण चीन सागर क्षेत्र में "आधारभूत सुरक्षा चिंताओं" को लेकर।

यूपी में बड़ा हादसाः सवारियां लेकर जा रहे ऑटो को रौंदकर ट्रक पलटा, छह लोगों की मौत

बदायू (एजेंसी)। यूपी के बदायूं-आंवला रोड पर थाना कुंवरगांव क्षेत्र के गांव ललेई के पास बुधवार अपराह्न बेकाबू ट्रक ने टेंपो को रौंद डाला। हादसे में टेंपो सवार छह लोगों की मौत हो गई। इनमें मां-बेटी भी शामिल हैं, जबकि एक व्यक्ति घायल हो गया। पुलिस ने शव कब्जे में ले लिए हैं। ट्रक का ड्राइवर भी हिरासत में बताया जा रहा है। शवों का पोस्टमार्टम की प्रक्रिया की रात में ही पुलिस ने तैयारी कर ली है। इधर, हादसे की खबर पर पहुंचे परिवार के लोगों में कोहराम मचा हुआ है। देर शाम तक जिला अस्पताल परिसर भी छावनी बना रहा।

कुंवरगांव से आ रहे टेंपो को बदायूं की ओर से जा रहे कोयला लदे ट्रक ने टक्कर मार दी। बताया जाता है कि इससे पहले भी ट्रक ने एक टेंपो को चपेट में लिया था। जबकि इस टेंपो को टक्कर मारने के बाद ड्राइवर संतुलन खो बैठा और टेंपो को रौंदने के बाद सड़क किनारे खंती में जाकर पलट गया। हादसे में टेंपो सवार प्रेमलता 55 वर्ष पत्नी डोरीलाल निवासी वार्ड संख्या पांच कस्बा कुंवरगांव के अलावा उनकी बेटी सपना पत्नी गजेंद्र व सपना की पांच साल की बेटी काव्या निवासीगण नकटिया, बरेली समेत टेंपो चालक बुंदी (40 वर्ष) निवासी गांव बनेई, मुनेशपाल (30 वर्ष) निवासी गांव हुसैनपुर के साथ मुरारी (35 वर्ष) निवासी कुंवरगांव की मौत हो गई।इमलिया गांव का मुकेश गंभीर रूप से घायल हो गया। घायल को जिला अस्पताल से हायर सेंटर रेफर किया गया है। एसपी सिटी प्रवीन सिंह चौहान ने बताया कि ट्रक से निकलकर भाग रहे एक व्यक्ति को दौड़ाकर पकड़ा गया है।

गन्ना मूल्य बढ़ेगा, किसानों पर दर्ज मुकदमे होंगे वापस : सीएम योगी

लखनऊ (एजेंसी)। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने किसानों को बड़ी राहत देते हुए बुधवार को कई घोषणाएं की। उन्होंने अधिकारियों को निर्देश दिए हैं कि गन्ने का समर्थन मूल्य बढ़ाया जाएगा। इसके अलावा पराली जलाने को लेकर किसानों पर दर्ज हुए सभी मुकदमें वापस लिए जाएंगे। साथ ही नए गन्ना सत्र से बकाया पिछला पूरा भुगतान तुंरत करा दिया जाएगा। गन्ना मूल्य कितना बढ़ाया जाना है यह मुख्यमंत्री जल्द ही तय कर देंगे। मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ बुधवार को प्रदेश भर के किसानों के साथ वर्चुअल संवाद कर रहे थे। इस दौरान गन्ना किसानों ने भुगतान और गन्ने का समर्थन मूल्य बढ़ाए जाने की बात रखी। इस पर मुख्यमंत्री ने तुरंत अधिकारियों को निर्देश दिए कि सभी संबंधित लोगों चीनी संघ, गन्ना किसान यूनियन आदि से बातचीत कर जल्द ही गन्ना मूल्य बढ़ाने का आदेश जारी कर दिया जाए। केंद्र सरकार ने बुधवार को ही गन्ने का समर्थन मूल्य बढ़ाकर 290 रुपये प्रति कुंतल कर दिया है। माना जा रहा था कि इसके बाद राज्य सरकार भी गन्ने का समर्थन मूल्य बढ़ा सकती है। मुख्यमंत्री ने निर्देश दिए कि गन्ना पेराई के नए सत्र से पहले पिछला सारा गन्ना भुगतान कर दिया जाएगा। दूसरी

ओर मुख्यमंत्री ने प्रदेश के सभी किसानों की समस्याएं हल करने के निर्देश दिए। उन्होंने पराली जलाने को लेकर प्रदेश भर में हुए सभी मुकदमों को वापस लेने के निर्देश दिए। उन्होंने अधिकारियों को निर्देश दिए कि ऐसे किसानों की सूची बनाई जाए, जिनसे प्रशासन न जुर्माना वसूला है। उनका जुर्माना भी तुरंत ही वापसी करने की प्रक्रिया शुरू की जाए।

शायर मुनव्वर राना का बेटा तबरेज लखनऊ से गिरफ्तार

लखनऊ (एजेंसी)। शायर मुनव्वर राना के फरार चल रहे बेटे तबरेज राना को बुधवार को शहर कोतवाल और एसओजी टीम ने लखनऊ से गिरफ्तार कर लिया है। तबरेज राना पर खुद पर गोली चलवाने का आरोप है। पुलिस ने इस पूरे षडयंत्र में शामिल चार शूटरों को पहले ही गिरफ्तार कर चुकी हैं। शायर मुनव्वर राना के बेटे तबरेज राना पर बीती 28 जून को रायबरेली के त्रिपुला चौराहे के पास हमला हुआ था। इस मामले में तबरेज ने अपने चाचा और अन्य परिजनों के विरुद्ध रिपोर्ट भी दर्ज कराई थी। पुलिस ने जब इसकी जांच की तो चौकाने वाला खुलासा हुआ। पुलिस की जांच में खुलासा हुआ था कि तबरेजा राना ने पैतृक संपति को बेचने के बाद अपने चाचा और चचेरे भाई को फंसाने के लिए बीती 28 जून की शाम लखनऊ-प्रयागराज हाईवे पर शहर कोतवाली के त्रिपुला चौराहे के पास स्थित पेट्रोल पंप के बाहर खुद पर गोली चलवाई थी।

आईपीएस पंकज कुमार बीएसएफ के नए महानिदेशक बने, संजय अरोड़ा होंगे आईटीबीपी के नए डीजी

नई दिल्ली (एजेंसी)। भारतीय पुलिस सेवा के 1988 बैच के अधिकारी पंकज कुमार सिंह बुधवार को सीमा सुरक्षा बल (बीएसएफ) के नए महानिदेशक (डीजी) नियुक्त किये गए। एक सरकारी आदेश में यह जानकारी दी गई है। सिंह राजस्थान कैडर के अधिकारी हैं और वर्तमान में बल के विशेष महानिदेशक (डीजी) के रूप में कार्यरत हैं। बीएसएफ पाकिस्तान और बांग्लादेश के साथ भारतीय मोर्चों पर 6,300 किलोमीटर से अधिक की रक्षा करता है। वह आईपीएस अधिकारी और आईटीबीपी के डीजी एस एस देसवाल की सेवानिवृत्ति के बाद 31 अगस्त को कार्यभार संभालेंगे, जो गुजरात कैडर के अधिकारी राकेश अस्थाना का कार्यकाल जुलाई में समाप्त होने के बाद बीएसएफ डीजी का अतिरिक्त प्रभार संभाल रहे हैं। सिंह के पिता और सेवानिवृत्त आईपीएस अधिकारी प्रकाश सिंह ने अतीत में सीमा सुरक्षा बल (बीएसएफ) के महानिदेशक के रूप में भी नेतृत्व किया था। बीएसएफ में करीब 2.65 लाख जवान हैं। सरकार ने 1988 बैच के आईपीएस अधिकारियों संजय अरोड़ा (तमिलनाडु कैडर) और बालाजी श्रीवास्तव को भारत-तिब्बत सीमा पुलिस और पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो का नया प्रमुख नियुक्त किया है।

खबर संक्षेप

शिक्षकों को आकस्मिक अवकाश के लिए पोर्टल पर आवेदन अनिवार्य

प्रयागराज। बेसिक शिक्षा विभाग के शिक्षकों में अवकाश को लेकर बरती जा रही लापरवाही पर बीएसए ने निर्देश जारी करते हुए कहा कि शिक्षकों को सभी तरह के अवकाश के लिए मानव संपदा पोर्टल पर ही आवेदन करना होगा। ऐसा न करने वाले शिक्षकों के अवकाश स्वीकृत नहीं होंगे। साथ ही अवकाश के बाद ज्वाइनिंग की सूचना भी पोर्टल पर अपडेट करनी होगी। चार दिन तक का आकस्मिक अवकाश प्रधानाचार्य स्वीकृत कर सकते हैं। जबकि इससे अधिक दिन का अवकाश लेने के लिए खंड शिक्षाधिकारी स्वीकृत करेंगे। चिकित्सकीय अवकाश के लिए भी प्रक्रिया होगी। आवेदनकर्ता को इसके लिए मेडिकल सर्टिफिकेट भी पोर्टल पर अपलोड करना होगा। मेडिकल प्रमाण पत्र अपलोड करने के दो दिन के अंदर ही बीईओ को अपनी सहमति या असहमति देनी आवश्यक होगी। इसके पश्चात यह प्रार्थना पत्र बीएसए के पास पोर्टल पर पहुंच जाएगा। वहां भी दो दिन के भीतर भी इसका निस्तारण हो जाएगा। बीएसए प्रवीण कुमार तिवारी के मुताबिक चिकित्सकीय अवकाश के लिए 42 दिन से कम का आवेदन है तो उसे स्वीकृति दी जा सकती है। यदि दोबारा आवेदन किया गया है और दोनों बार के अवकाश की अवधि 42 दिन से अधिक है तो उसकी मंजूरी बीईओ व बीएसए स्तर से होगी।

घूरपुर पुलिस और बदमाशों के बीच मुठभेड़ एक को लगी गोली गिरफ्तार, दो फरार

घटना को अंजाम देने खड़े थे बदमाश पुलिस टीम देखते ही झोंक दी फायर

अखंड भारत संदेश

मुठभेड़ में पुलिस की गोली लगने से घायल बदमाश व पास में पड़ी बदमाश का तमंचा

घूरपुर। आपराधिक घटना को अंजाम देने जा रहे लुटरे गैंग से मंगलवार की देर रात घूरपुर पुलिस से मुठभेड़ हो गई । बदमाशों द्वारा चलाई गई गोली से बचते हुए पुलिस टीम ने आत्म रक्षार्थ फायरिंग की तो गैंग के मुख्य सरगना के पैर में गोली लग गई । जिससे वह घायल हो गया और उसके दो साथी अंधेरे का फायदा उठाते हुए भाग निकले । घटना स्थल से पुलिस ने तमंचा व एक चोरी की बाइक बरामद की है ।

घूरपुर एसओ राजेश उपाध्याय के अनुसार मंगलवार की रात उन्हें सूचना मिली कि गौहनिया पेट्रोल पम्प के पास कुछ बदमाश किसी बड़ी घटना को अंजाम देने के लिए हथियारों से लैस खड़े है । सूचना को सही मानते हुए एसओ ने अपने सहयोगी दरोगा ज्ञानेश कुमार,अमित सिंह,सुरेंद्र कुमार सहित कई पुलिस कर्मियों को लेकर घेरे बंदी की तो बदमाश पुलिस टीम पर फायरिंग झोकते हुए अमरेहा गौहनिया के मध्य स्थित ओवर ब्रिज की ओर भागने लगे । पुलिस टीम बचते हुए जवाबी फायरिंग करते हुए पकड़ने के लिए पीछे दौड़ी जवाबी फायरिंग में एक बदमाश के पैर में गोली लग गई और वह घायल होकर गिर गया ।पुलिस घायल बदमाश के पास पहुंची तो उसके अन्य साथी भाग निकले थे । पुलिस ने बदमाश का नाम सोनू डांडी पुत्र नईम डांडी निवासी भंडरा थाना नैनी बताया है । गोली लगने से घायल बदमाश को इलाज के लिए अस्पताल में भर्ती कराया गया है । सोनू डांडी के विरुद्ध कई पेट्रोल पंप, और कई डकैती समेत के आरोप में कई थानों में केस दर्ज है ,घूरपुर थाने से यह गैंगेस्टर में भी है।

चोरी के मोबाइल के साथ पुलिस गिरफ्त में चोर

चोरी के मोबाइल के साथ दो चढें पुलिस के हत्थे

करछना। थाना के भीरपुर रिपोर्टिंग पुलिस चौकी के अंतर्गत कचरी गांव स्थित रेलवे पुलिया के नीचे से चोरी के दो मोबाइल फोन के साथ दो अभियुक्तों को पुलिस ने गिरफ्तार कर जेल भेजा। बुधवार को भीरपुर चौकी इंचार्ज शिवांशु पांडे को खास मुखबिर की सूचना मिली कि दो अभियुक्तों चोरी के मोबाइल के साथ कचरी स्थित रेलवे पुलिया के पास खड़े हैं । मामले को संज्ञान में लेते हुए चौकी इंचार्ज ने हमरा सिपाहियों के साथ मौके पर पहुंचकर दोनों अभियुक्तों को हिरासत में ले लिया। दोनों अभियुक्तों का नाम पूछे जाने पर रोहित कुमार यादव पुत्र स्वर्गीय संतोष कुमार निवासी लोहारी सिरसा थाना ,मेजा व शिवम यादव उर्फ गोलू पुत्र प्रदीप चंद्र निवासी लोहारी थाना मेजा के रूप में है। जिनके पास है चोरी के दो मोबाइल फोन बरामद हुआ है।

न्यूज झरोखा

जमीन के विवाद में दबंगों ने पति पत्नी को पीटा 4 पर मुकदमा दर्ज

जमीन विवाद में दबंबों द्वारा की गयी पिटाई से घायल महिला

उतरांव प्रयागराज। उतराव थाना क्षेत्र के बलकसराय सराय इस्माइल गांव में जमीन के विवाद में दबंगों ने पति पत्नी की जमकर पिटाई कर दी। वहीं लहूलुहान पति पत्नी उतराव थाने में पहुंचकर दबंगों के खिलाफ नामजद तहरीर दी तो पुलिस ने चार लोगों के खिलाफ मुकदमा पंजीकृत कर घायल पुरुष व महिला को सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र के लिए भेज दिया। सराय इस्माइल थाना उतराव निवासी मोहम्मद शाहिद व पड़ोस की मन्नान में जमीन को लेकर विवाद चल रहा है ।जिसका मामला न्यायालय में भी विचाराधीन है। वही दबंगों द्वारा विवादित जमीन पर निर्माण कार्य शुरू किया तो पीड़ित ने भी अपने जमीन में निर्माण करना शुरू किया। इतना देर दबंगों ने शाहिद पुत्र छन्ने पर हमला कर दिया। पति को पीटते देख पत्नी नजराना बीच बचाव में गई तो बेरहम दबंगों ने धारदार हथियार से हमला कर दिया। हमले में पति-पत्नी लहूलुहान हो गए। वही उतराव थाने में पहुंचकर दबंगों के खिलाफ नामजद तहरीर दी तो पुलिस ने मन्नान पुत्र अज्ञात सैफ पुत्र मन्नान, सुहेल पुत्र मन्नान व सलमान पुत्र अबरार पर मारपीट धारदार हथियार से हमला समेत कई संगीन धाराओं में मुकदमा पंजीकृत कर घायल महिला पुरुष को सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र सैदाबाद के लिए भिजवा दिया। वही हालत नाजुक देखते हुए घायल नजराना को डॉक्टर ने जिला अस्पताल के लिए रेफर कर दिया। पुलिस मामले की जांच में जुटी हुई है।

आंखें सभी के लिए अनमोल है : मनोज निषाद

आंखों की जांच कराते मरीज

उतरांव। 24 अगस्त मंगलवार को श्री सद्गुरु सेवा ट्रस्ट चित्रकूट विशाल नेत्र शिविर परीक्षण का ननआयोजन हेतापट्टी बाजार राम कैलाश भारतीया पूर्व प्रधान फैजुल्लापुर के आवास पर मोतियाबिंद का निशुल्क नेत्र शिविर का आयोजन किया गया। जिसमें कार्यक्रम के । मुख्य अतिथि मनोज निषाद जिला महामंत्री भाजपा के द्वारा मां सरस्वती को दीप प्रज्वलित कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया गया। और उन्होंने सभी आंख के प्रति सचेत रहने की अपील की जैसा कि प्रतिमाह 24 तारीख को कैम्प लगवा कर अपने क्षेत्र की जनता को आंखों के रोग से निजात दिलाने के लिए संकल्प लिए हैं। 24 तारीख मंगलवार को नेत्र शिविर में 300 लोगों को निशुल्क जांच श्री सद्गुरु सेवा ट्रस्ट चित्रकूट से आए डॉक्टर शिवाकांत त्रिपाठी, डॉ अमित मिश्रा, डॉ पंकज गुप्ता, की विशाल टीम ने जांच किया। एवं 40 लोगों को मोतियाबिंद ऑपरेशन के लिए ट्रस्ट द्वारा चित्रकूट भेजा गया। नेत्र शिविर मेंआए सम्मानित अतिथि। एडवोकेट आशीष प्रजापति ने कहा ऐसे कार्यों के लिए जितनी भी तारीफ की जाए उतनी ही कम है। ऐसे शिविर के माध्यम से गरीब वर्ग के मरीज का बेहतर इलाज मिलता है। इस शिविर के संयोजक समाजसेवी सुमित केसरवानी ने कहा कि इस दुनिया में जन्म लेने वाले जितने भी प्राणी हैं। उनके लिए आंखें अनमोल है। इसलिए उनकी देखभाल बहुत जरूरी है। नेत्र शिविर में आए हुए सम्मानित अतिथि। रामसेवक पत्रकार ,दुर्गेश भारतीया, आलोक यादव बीडीसी, पिंटू गुप्ता ,उपेंद्रनाथ सिंह एडवोकेट, मनोज ,आदि सभी आए हुए अतिथियों का आभार जताया।

करछना ब्लाक में आवास स्वीकृति में व्यापक पैमाने पर खेल!

अखंड भारत संदेश

करछना। विकास खंड के ग्राम पंचायतों में बनने वाले प्रधान मंत्री आवास आवंटन और शौचालय की स्वीकृति के बाद बडे पैमाने पर पात्रों के चयनित का नाम काट दूसरे के नाम आवंटन किए जाने का खेल आफिस में बैठे बाबुओं और पूर्व प्रधानो की मिली भगत से पात्रों को अपात्र दिखा कर बड़े पैमाने धांधली की जा रही है । जिसको लेकर नव निर्वाचित प्रधानो में गहरी नाराजगी जाहिर की है । और उच्च अधिकारियों से शिकायतों का दौर जारी है, नाम न छापने की शर्त पर कुछ नये प्रधानो बताया कि आवास और शौचालय में की जा रही धांधली में शामिल कर्मियों को चिन्हित कर उच्च अधिकारियों से लेकर मुख्यमंत्री तक शिकायत की गई है, और दोषियों के खिलाफ कार्रवाई की मांग की है ।सूत्रों के अनुसार अभी नव निर्वाचित प्रधानो के चुनाव के बाद से अभी आधे से ज्यादा ग्राम प्रधानो के बैंक खाते नहीं खुल सके है, यह सब खेल पंचायत सचिवो की बदौलत प्रधानो के बैंक खाते पेंडिग है, ऐसी दशा में निर्वाचित प्रधान कार्य और अधिकार से वंचित हैं, और करछना ब्लाक में इस बार के पंचायत चुनाव में 95 प्रतिशत नये चेहरे है उन्हे खुद अभी पूरी तरह से जानकारी नहीं है, ऐसे में पूर्व प्रधानो व आफिस के बाबुओं ने पैठ बना कर कमीशन एवं मोंटी रकम की बदौलत आवास आवंटन व शौचालय आवंटन में पात्र व अपात्र के सह मात के खेल में विवाद व टकराव की स्थिति बनी हुई है । जिसको लेकर गांवो में भी तनाव की स्थिति पैदा हो रही हैं। इस बावत एडीओ पंचायत विवेक पाण्डेय से एक प्रश के जबाब में बताया कि अभी ऐसी शिकायत नहीं मिली है अगर शिकायत मिलने पर जांच कराई जाएगी की बात कही।

पूर्व सांसद उमाकांत यादव के बेटों को 90 दिन में समर्पण कर जमानत कराने की छूट

प्रयागराज। इलाहाबाद हाईकोर्ट ने पूर्व सांसद और बाहुबली नेता उमाकांत यादव के बेटों रविकांत यादव व दिनेश कांत यादव की अग्रिम जमानत देने के मामले में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया है। याची की मांग पर उसे 90 दिनों के भीतर कोर्ट में समर्पण कर जमानत अर्जी दाखिल करने और उसे विधि व्यवस्था अनुसार निर्णीत करने का निर्देश दिया है।

कोर्ट ने इस दौरान याचियों के विरुद्ध उत्पीड़नात्मक कार्रवाई पर रोक लगा दी है। कोर्ट ने स्पष्ट किया कि इसके बाद अतिरिक्त समय नहीं दिया जाएगा और पुलिस उत्पीड़नात्मक कार्रवाई कर सकेगी। यह आदेश न्यायमूर्ति सिद्धार्थ ने दिया है। याचियों के खिलाफ आजमगढ़ के फूलपुर थाने में षड्यंत्र व लोक संपत्ति को नुकसान पहुंचाने के आरोप में एफ आई आर दर्ज कराई गई है।

वन विभाग ने रक्षासूत्र बांध लिया पर्यावरण संरक्षण का संकल्प

अखंड भारत संदेश

वन विभाग द्वारा चलाये जा रहे रक्षा सूत्र अभियान के तहत रक्षा सूत्र बांधते बारा विधायक

शंकरगढ़, प्रयागराज। पर्यावरण,वन एवं जलवायु परिवर्तन विभाग द्वारा चलाए जा रहे रक्षासूत्र बंधन अभियान के तहत बुधवार को वन विभाग शंकरगढ़ द्वारा बारा तहसील परिसर में बारा विधायक डॉ अजय कुमार की मौजूदगी में पौधों को रक्षा सूत्र बांधकर उनकी रक्षा का संकल्प लिया।

प्रदेश के पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन विभाग द्वारा 22 से 29 अगस्त तक विरासत वृक्षों एवं अब तक रोपित पौधों की रक्षा एवं संरक्षण के लिए रक्षा सूत्र बंधन कार्यक्रम की शुरूआत की गई है। इसी क्रम में वन विभाग शंकरगढ़ द्वारा बारा तहसील क्षेत्र में रोपित किए गए पौधे एवं पौराणिक वृक्षों पीपल आदि को रक्षासूत्र बांधकर उनकी रक्षा तथा धरा को हरा भरा बनाने का संकल्प लिया गया। वन संरक्षक अधिकारी मनीष कुमार सिंह ने बताया कि शासन के निर्देश पर शंकरगढ़ क्षेत्र में जो पौधरोपण किया गया है। उन सभी पौधों पर वन कर्मियों द्वारा रक्षा सूत्र बांधकर उनके संरक्षण का संकल्प लिया गया है। बताया कि रक्षासूत्र बंधन अभियान से अन्य सामाजिक संगठन एवं संस्थाओं को भी जोड़ा जाएगा। इस अवसर पर बारा विधायक डॉ अजय कुमार, उपजिलाधिकारी बारा सौम्या गुरुरानी, राजा चौहान, संजय मौर्य, वन दरोगा उदयभान सिंह, मनोज आनंद, जितेंद्र पटेल व क्षेत्र के तमाम गणमान्य व्यक्ति उपस्थित रहे।

पिछले एक माह से बजहा निवासी अंधेरे में रहने को मजबूर

अखण्ड भारत सन्देश

बिजली विभाग अधिकारियों के लापरवाही से ग्रामवासी पानी पीने के लिए दर-दर भटक रहे हैं

सिरसा/मेजा। प्रयागराज मेजा क्षेत्र विकास खण्ड उरूवा ग्राम पंचायत बजहा गांव में बिजली आपूर्ति के लिए लगाया गया 25 केवीए का ट्रांसफार्मर एक माह पूर्ण जल गया है। तभी से गांव के लोगों को बिजली नहीं मिल पा रहा है। शिकायत के बाद भी बिजली विभाग ने कोई कदम नहीं उठाया इसको लेकर बजहा गांव के लोगों में नाराजगी है। ग्रामीणों का कहना है कि ट्रांसफॉर्मर बदलकर आपूर्ति न की गई तो वह धरना प्रदर्शन करने को मजबूर होंगे। इस दौरान ग्रामीणों अंधेरे में रात गुजारने को विवश हो रहे हैं ट्रांसफार्मर एक माह से जला पड़ा है लेकिन इसे बदलने को लेकर बिजली विभाग उदासीन बना हुआ है। संविदा कर्मी लाइनमैन एसडीओ द्वारा और संबंधित अधिकारियों की लापरवाही से गांव के लोग पानी पीने के लिए दिक्कत का सामना करना पड़ रहा है ।ओवरलोड होने से दूसरा भी ट्रांसफार्मर जल गया बजहा के निवासी पिछले एक महीने से अंधेरे में रहने को मजबूर हैं। बिजली न होने से पंखे आदि नहीं चल पा रहे हैं। जिससे मच्छरों का प्रकोप बढ़ता जा रहा है और तरह-तरह की बीमारी होने का खतरा बढ़ता जा रहा है। कच्चे मकान में रहने वाले लोगों को सांप बिच्छू आदि जानवरो का डर भी बना रहता है। ग्रामीणों ने बताया की यहां लोड ज्यादा है और ट्रांसफॉर्मर कम पावर का लगा हुवा है इसलिए बार-बार खराब हो जाता है इसके संबंध में एसडीओ को अवगत कराया गया लेकिन आश्वासन के सिवा कुछ नहीं मिलता है 25 केवीए ट्रांसफार्मर को 63 केवीए का किया गया लेकिन बिजली विभाग की लापरवाही से आज तक नहीं लग पाया हैं ठीक उसी के बगल 500 मीटर की दूरी पर 25 केवीए का ट्रांसफार्मर लगा हुआ था जो अब तक बिजली सप्लाई गांव में करता था लेकिन ओ भी एक हप्ते से जल गया हैं। बजहा ग्रामप्रधान प्रतिनिधि रामशिरोमणि नानक विश्वकर्मा ने कई बार बिजली विभाग जेई से शिकायत किये लेकिन उन्हें भी आश्वासन के सिवा कुछ सफलता नही मिला। देखा जाय तो बिजली विभाग अधिकारियों और कर्मचारियों के उदण्डता और लापरवाही से कई गाँवो में बिजली की ब्यवस्था चरमरा चुकीहैं। इन्ही जिम्मेदार अधिकारियों और कर्मचारियों से आये दिन घटना घटती हैं। इस समस्या को जल्द दूर नही किया गया तो वह दिन दूर नही जब ग्रामवासियो धरना और प्रदर्शन को बाध्य होंगे।

अपर मुख्य सचिव गृह ने हाईकोर्ट में दिया हलफनामा व्यापारियों के खिलाफ पुलिस नहीं करेगी मनमानी कार्रवाई

प्रयागराज। अपर मुख्य सचिव गृह अवनीश कुमार अवस्थी ने इलाहाबाद हाईकोर्ट में आश्वासन दिया है कि व्यापारियों से जुड़े मामलों में पुलिस मनमाने तरीके से कार्रवाई नहीं करेगी। राज्य सरकार जल्द ही इस मामले में गाइडलाइन जारी करेगी। अवस्थी बुधवार को इलाहाबाद हाईकोर्ट के निर्देश पर अदालत में उपस्थित हुए थे। कोर्ट ने मंगलवार को जारी एक आदेश में अपर मुख्य सचिव गृह के अलावा एसपी जालौन रवि कुमार और नंदी गांव थाना जालौन के सब इंस्पेक्टर केदार सिंह को तलब किया था ।कोर्ट का कहना है कि यह लगातार देखने में आ रहा है कि पुलिस व्यापारियों के खिलाफ मनमाने तरीके से कार्रवाई कर रही है और उन पर धोखाधड़ी की धारा 420 के तहत मुकदमे दर्ज किए जा रहे हैं। जालौन के व्यापारी विशाल गुप्ता की याचिका पर न्यायमूर्ति एसपी केसरवानी और न्यायमूर्ति पीयूष अग्रवाल की पीठ ने सुनवाई की ।

श्री सेठ राम अभिलाष इंटर कालेज मे लौटी रौनक

श्री सेठ राम अभिलाष इंटर कालेज में पहुंचे छात्र

अखंड भारत संदेश

घूरपुर। प्रदेश के शासनादेश के पश्चात जनपद के विभिन्न विद्यालयों मे रौनक आ गयी। विद्यालयों मे लगभग पांच माह बाद विद्यार्थी एक दूसरे को देखकर प्रसन्नचित्त दिखें। इसी क्रम मे शिटकहिया स्थित श्री सेठ राम अभिलाष इंटर कालेज मे भी सामाजिक दूरी एवम मास्क पहनकर शिक्षण कार्य सम्पन्न किया जा रहा हैं। यमुनापार मे विज्ञान वर्ग के सर्वश्रेष्ठ कॉलजों की सूची मे शुमार श्री सेठ राम अभिलाष पटेल इंटर कालेज के प्रधानाचार्य श्री शिव रतन सिंह के मुताबिक विद्यालय के स्थापना काल के उपरांत से ही विद्यालय सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले टाप टेन की सूची मे भी शुमार रहा हैं। साथ ही आज बड़े पैमाने पर यहाँ के विद्यार्थी उच्च पदों पर आसीन होकर समाज एवम राष्ट्र की सेवा मे अपना योगदान दें रहें हैं। जिससे विद्यालय परिवार स्वयं को बहुत गौरवान्वित महसूस करता हैं। विद्यालय के ही इंटर मे अध्ययनरत छात्रायें पुष्पा पटेल, रिंकी कुशवाहा, मनोरमा बिन्द, पलक तिवारी के मुताबिक विगत दो वर्षों से कोरोना महामारी के कारण शिक्षा जगत पर काफी नकारात्मक असर पड़ा हैं किन्तु विद्यालय के प्रबंधन एवम प्रबंधक ए. पी. सिंह के नेतृत्व मे कोरोना महामारी मे भी नियमित आनलाइन कक्षाए संचालित की जा रही थी।इसी प्रकार विद्यालय के ही ग्यारहवीं मे अध्ययनरत आरजू तिवारी, साक्षी पटेल,ममता यादव आदि छात्र एवम छात्राओं नें भी विद्यालय खुलने पर शासनादेश के फैसले से खुशी का इजहार किये हैं।

छात्र और शिक्षक को करनी होगी कड़ी मेहनतः ए पी सिंह

घूरपुर। कालेज के प्रबंधक ए पी सिंह ने कहा कि विगत दो वर्षों से कोरोना महामारी के कारण शिक्षा व्यवस्था पर बहुत बुरा असर पड़ा हैं। विद्यार्थियों को कोरोना महामारी मे भी नियमित रूप आनलाइन कक्षाओं के माध्यम से शिक्षण कार्य किया जाता रहा हैं। लेकिन छात्र पहले जैसे मजबूत नहीं हो सके। इसलिए अब छात्रों और शिक्षकों को कड़ी मेहनत करनी होगी। विद्यालय मे किसान के ही पुत्र एवम पुत्रियाँ बहुतायात संख्या मे पढ़ते हैं और विद्यालय से शिक्षा ग्रहण करने वाले बड़ी संख्या मे विद्यार्थी आज उच्च पदों पर आसीन हैं जो विद्यालय सहित समाज के लिए गौरवान्वित करने जैसा हैं। इसलिए कमियों को पूरा करने के लिए मेहनत करनी होगी।

लाभार्थियों को आवास की चाभी सौंपेंगे कैबिनेट मंत्री नन्दी

नैनी। उत्तर प्रदेश के नागरिक उड्डयन, अल्पसंख्यक कल्याण, राजनैतिक पेंशन, मुस्लिम वक्फ एवं हज मंत्री व प्रयागराज शहर दक्षिणी विधानसभा क्षेत्र से विधायक नन्द गोपाल गुप्ता नन्दी गुरुवार दोपहर को सर्किट हाउस सभागार में प्रधानमंत्री आवास योजना, सबके लिए आवास (शहरी) के लाभार्थियों को उनके आवास की चाभी सौंपेंगे।

इस दौरान नैनी क्षेत्र के करीब 100 से अधिक लाभार्थी मौजूद रहेंगे। प्रयागराज नगर निगम एवं नगर पंचायत क्षेत्र में 14,000 लोगों को प्रधानमंत्री आवास योजना के तहत निर्माण के लिए प्रथम किस्त दी जा चुकी हैं। वहीं बड़ी संख्या में ऐसे भी लाभार्थी हैं, जिन्हें आवास निर्माण की सभी किस्त दी जा चुकी है।

क्या कोरोना भी जाति धर्म मजहब देखने लगा !

सरकार की कोविड गाइड लाइन सिर्फ और सिर्फ विशेष समुदाय के लिए बनी,भाई चारे को खत्म करने का कुप्रयास, लक्ष्मी शंकर यादव

अखंड भारत संदेश

कोराव,प्रयागराज। हिन्दू मुस्लिम सिख ईसाई आपस में सब भाई भाई का देश में प्रचलित नारा अब फिरका परस्ती और नफरत की दीवारों में तब्दील होता जा रहा। देश की आजादी के इतने सालों बाद तक सब कुछ सही चला आ रहा ,

दर असल वर्तमान हुकूमत जो सभी के लिए कृत संकल्पित है। किन्तु कोरोना काल में सभी के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन ने एक महामारी से बचने के लिए जो गाइड लाइन बनाई,वो सभी जाति धर्म मजहब के लिए बनाई। भीड़ को रोकने,त्योहारों पर गाइड लाइन का उल्लंघन न हो इसके लिए स्थानीय प्रसाशनों को सक्रीय कर दिया।

काफी समय से देखा जा रहा कि गाइड लाइन का उल्लंघन चुनावों में दिखा,रैलियों में दिखा,उल्लंघन के आरोपियों को देश द्रोही तो कहीं बीमारी फैलाने के आरोप में जेल तक भेजवाया गया। ईद,आई,बकरीद, आई,बारहवफात,आया, सुबरात के त्योहार आए,सरकार ने कोवीड गाइड लाइन का उल्लंघन न हो इसके लिए पुलिस प्रशासन का इस्तेमाल किया। उक्त विशेष समुदाय ने त्योहारों को सादगी से मनाया। किन्तु मोहर्रम का पर्व को सभी जाति मजहब के लोग मानते हैं। उस पे एक भाजपा विधायक का बयान आया और सोशल मीडिया में वायरल हुआ कि जो ताजिया निकाले गा उसकी खैर नहीं। अफसरों ने थानों पे पीस कमेटी की बैठक के बहाने भी बुलाकर ताजियादारों विशेष समुदाय के लोगों को चेतावनियां पुलिस द्वारा दीलाई गई कि जो ताजिया निकालेगा चौक पर भी उसके खिलाफ कार्रवाई होगी। जगह जगह ताजिया इमाम बाणों से उतरवा भी दिया गया। किन्तु वहीं दूसरी तरफ इसी सरकार में सिवीलिंग पार्थिव रुद्राभिसेख का आयोजन निरंतर भारी भीड़ के साथ चल रहा है। जगह जगह बड़े बड़े एक विशेष पार्टी के अयोजन मीटिंग हालों आदि स्थानों पर आयोजित हो रहे,कहीं जन आशीर्वाद यात्रा तो कहीं तिरंगा यात्रा,तो कहीं वर्तमान त्योहारों पर भीड़ भाड़ का नजारा सारा देश व हर समुदाय देख रहा है, क्या ऐसे आयोजनों पर गाइड लाइन का उल्लंघन नहीं हो रहा? क्या विशेष समुदाय से ही गाइड लाइन का उल्लंघन डब्लूएचो द्वारा माना जाएगा। फिर भी उक्त सोसित समुदाय सरकारी फरमान और गाइड लाइन का पालन करता दिख रहा। इससे सरकार की विशेष समुदाय के प्रति व्यवहार सकारात्मक नहीं दिखता। जिससे लोगों में मायूसी है। और भी समुदाय के लोगों में नाराजगी वी अफसोस है।

क्या बोले लोग.....

मैं मानता हूं कि जो भी सरकार हो, वो सभी को कानून का पालन कराने के लिए सभी जाति धर्म मजहब के लिए होना चाहिए। भेद भाव नहीं होना चाहिए। किसी भी नेता को समाज विरोधी बयान पर सत्ता सरकार को दंडित किया जाना चाहिए। सरकार के लिए सभी धर्म समान होने चाहिए। इससे मैं सहमत हूं। कोरोना आखिर क्यों पहचान कर आता है।,,

लक्ष्मी शंकर यादव
अध्यक्ष प्रगतिशील समाजवादी पार्टी कोरांव विधान सभा प्रयागराज

मैं इतना जानता हूं कि वर्तमान सरकार अपने कार्यक्रम के लिए कोई रोक टोक नहीं करती। न तो कोविड गाइड लाइन का उल्लंघन देखती है। सिर्फ दूसरे पार्टी व विशेष समुदाय के कार्यक्रमों के लिए ही उक्त कानून का पालन कर लोगों की परम्पराओं मान्यताओं का अपमान शोषण कर रही है।

सोमदत्त सिंह पटेल
सदस्य जिला पंचायत प्रयागराज

कोविड गाइड लाइन का उल्लंघन सिर्फ एक समुदाय व उनके त्योहारों से होगा,यह असम्भव है। हिंदू भी मुस्लिमों के त्योहारों को मानते व शामिल होते हैं। और मुस्लिम भी। मोहर्रम त्योहार पर हम लोगों ने इमाम चौक पे हर साल की तरह मन्नते मांगते हैं। किन्तु सरकार ने ताजिया ही नहीं निकलने दिया। जिससे मन्नते सब बेकार हो गई। जबकि हमारा त्योहार निरंतर चल रहा है। भीड़ भाड़ भी है। कोई रोक टोक नहीं। दोहरा मान दंड अनुचित है। सभी के लिए एक समान सम्मान मिलना चाहिए।

श्रीमती प्रेम काली
प्रतिनिधि मिस्कीन सेवा संस्थान ट्रस्ट कोरांव प्रयागराज

खबर संक्षेप

शहर में तेजी से पांव पसार रहा डेंगू, दो नए संक्रमित मिले, अब तक 15 मरीज

प्रयागराज। डेंगू अब पांव पसार रहा है। तीन दिनों से लगातार मरीज चिह्नित हो रहे हैं। बुधवार को दो बुखार पीड़ितों में डेंगू संक्रमण की पुष्टि हुई है। जिले में अब तक 15 डेंगू पीड़ित पाए गए हैं। दो का इलाज अलग-अलग निजी अस्पतालों में चल रहा है।

जिला मलेरिया अधिकारी डॉ. आनंद सिंह के मुताबिक बाढ़ प्रभावित इलाकों में एंटी लार्वा छिड़काव कराया जा रहा है। बुखार पीड़ितों में डेंगू के लक्षण दिखने पर उन्हें मेडिकल कॉलेज की पैथालॉजी में जांच कराने की सलाह दी जा रही है। डॉ. आनंद ने बताया कि बुधवार को जिन दो लोगों में डेंगू संक्रमण की पुष्टि हुई है, उन्हें कई दिनों से बुखार की शिकायत थी। जांच कराने पर संक्रमण की पुष्टि हुई तो उन्हें दवाएं दी गई हैं। चिकित्सकों की टीम ने डेंगू संक्रमितों का परीक्षण किया है। मरीज और आसपास के 50 घरों के अंदर बाहर छिड़काव कर दवाएं दी गई हैं। उन्होंने बताया कि संचारी रोगों पर नियंत्रण की पूरी तैयारी है। सभी निजी चिकित्सालयों के संचालकों से कहा गया है कि यदि डेंगू के मरीज सामने आते हैं तो उनके बारे में सूचनाएं उन्हें या सीएमओ कार्यालय को तुरंत उपलब्ध कराएं।

डा. बंसल हत्याकांड का मुख्य आरोपी गिरफ्तार

अखंड भारत संदेश

50 हजार का था इनामी

प्रयागराज। एसटीएफ ने बुधवार की शाम बंसल हत्याकांड के मुख्य आरोपी आलोक सिन्हा को गिरफ्तार कर लिया। 50 हजार का इनामी आलोक हत्याकांड के बाद से ही फरार चल रहा था। उसने हत्या के लिए शूटरों को 70 लाख की सुपारी दी थी। पुलिस ने कुछ महीने पहले एक शूटर को पकड़कर मामले का खुलासा किया था। आलोक को नामजद करते हुए उसे खोज रही थी। डा. बंसल ने बेटे के एडमीशन विवाद में आलोक को जेल भेजवा दिया था। इसी खुन्नस में आलोक ने शूटरों से हत्या करवा दी।

रामबाग स्थित जीवन ज्योति नर्सिंग होम के मालिक डा. एके बंसल की 12 जनवरी 2017 को उनके ही चैंबर में गोली मारकर हत्या कर दी गई थी। घटना के करीब सवा चार साल बाद अप्रैल महीने में एसटीएफ ने मामले का खुलासा करते हुए शूटर शोएब को गिरफ्तार किया था। इसके बाद अन्य आरोपियों के साथ आलोक सिन्हा को नामजद किया गया था। शासन ने आलोक पर 50 हजार का इनाम भी घोषित किया था। डिप्टी एसपी नवेंदु सिंह ने बताया कि बुधवार को टीम ने कीडगंज स्थित परेड ग्राउंड से आलोक सिन्हा को गिरफ्तार कर लिया। वह फार्च्यूनर गाड़ी से किसी से मिलने आया था।पूछताछ में उसने बताया कि गाजियाबाद में कोचिंग चलाने के दौरान बड़े बड़े प्राइवेट मेडिकल कालेजों में जान पहचान हो गई थी। बंसल के बेटे अर्पित का डीएम नेफ्रोलजी में एडमीशन कराने के लिए उसने 55 लाख लिए थे। आलोक के मुताबिक जब वह एडमीशन नहीं करा पाया तो बंसल ने रुपये वापसी के लिए तरह तरह दबाव बनाया। जब वह पैसा नहीं लौटा पाया तो सिविल लाइंस थाने में एफआईआर कराके उसे जेल भेज दिया। जेल में आलोक की मुलाकात बंसल के एक और दुश्मन दिलीप मिश्रा और अख्तर कटरा समेत कई अपराधियों से हुई। दिलीप ने अख्तर कटरा से बात कर शूटर मुहैया करा दिए। शूटरों को 70 लाख दिए गए और बंसल को उनके ही चैंबर में गोलियों से भून दिया गया। आलोक ने डा. बंसल की हत्या के लिए शूटरों को 70 लाख की सुपारी दी थी। बंसल ने आलोक को धोखाधड़ी में जेल भिजवाया। वहीं पर बंसल के एक और दुश्मन दिलीप मिश्रा के साथ मिलकर आलोक ने हत्या की साजिश रची और शूटरों से डा. बंसल की हत्या करा दी। उसे कीडगंज थाने में दाखिल किया गया है। गुरुवार को उसे जेल भेजा जाएगा।

न्यू पेंशन स्कीम के विरोध में गरजे रेलकमी, निकाला जुलूस

न्यू पेंशन स्कीम के विरोध में गरजे रेलकमी, निकाला जुलूस

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज। न्यू पेंशन स्कीम (एनपीएस) के विरोध समेत 30 सूत्रीय मांगों को लेकर रेलकर्मियों ने बुधवार प्रदर्शन किया। नार्थ सेंट्रल रेलवे इंपलाइज संघ के बैनर तले हुए प्रदर्शन में रेलकर्मियों ने प्रयागराज जंक्शन सिविल लाइंस साइड से डीआरएम ऑफिस तक जुलूस भी निकाला। वहां डीआरएम को 30 सूत्रीय मांगों को एक मांगपत्र सौंपा गया।इंपलाइज संघ के जोनल महामंत्री आरपी सिंह के नेतृत्व में जंक्शन स्थित कार्यालय में जुलूस निकाले जाने से पूर्व एक सभा हुई। सभा में मंडल मंत्री मान सिंह ने कहा कि केंद्र सरकार का रवैया मजदूर विरोधी है। कहा कि सरकार ने कारोना के बहाने एक जनवरी 2020, एक जुलाई 2020 एवं एक जनवरी 2021 से मिलने वाले डीए को मनमाने ढंग से बंद कर दिया। इससे मजदूरों को गंभीर नुकसान हो रहा था, इसका इंपलाइज संघ ने विरोध किया तो जुलाई माह में सरकार ने डी.ए. देने की घोषणा की लेकिन अभी भी सरकार ने 18 माह के डीए का एरियर नहीं दिया है।सभा में पूर्व मंडल सचिव गोबिन्द सिंह ने कहा कि सरकार द्वारा 43600 रुपए के ऊपर वेतन पाने वालों का रात्रि भत्ता बन्द कर दिया गया है जबकि भारतीय रेलवे में कर्मचारी रात दिन कार्य किया करते है। यूनियन नेता आलोक सहगल ने कहा कि रेल कर्मियों से आठ घंटे के बजाय 12-12 घंटे काम लिया जा रहा है, जो बिल्कुल ही अमानवीय है। सभा में रेलकर्मियों ने गार्ड/लोको पायलट को 4600 और ट्रैक मेंटेनरों को 4200 ग्रेड पे देने की मांग प्रमुखता से उठाई गई। महिलाओं के कार्यस्थल पर चेजिंग रूम, शौचालय ने होने का मुद्दा भी रेलकर्मियों ने उठाया। नेताओं ने सरकार को आगाह किया कि रेलवे का निगमीकरण/निजीकरण किया गया तो आन्दोलन को और भी सशक्त बनाया जायेगा। आवश्यकता पड़ी तो रेल का चक्का भी जाम किया जायेगा। इस दौरान रेलकर्मियों का जुलूस जंक्शन स्थित यूनियन कार्यालय से निकला जो नवाब युसूफ रोड होता हुआ डीआरएम ऑफिस तक गया। वहां डीआरएम को ज्ञापन सौंपा गया। इस अवसर पर एसके मिश्र, एस. के. सिंह, अखिलेश सिंह राठौर, सत्य नारायण, सत्यम गुप्ता, बी. के. यादव, राकेश चौधरी, अनिल यादव, शास्त्री देवी, एस. के. यादव, एस. के. शर्मा आदि मौजूद रहे ।

दुष्कर्म की रिपोर्ट दर्ज करने वाली महिला सिपाही ने आरोपी से की शादी

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज। एसएसपी के फोटोग्राफी सेल में तैनात सिपाही पंकज यादव के खिलाफ दुष्कर्म की रिपोर्ट के मामले में बुधवार को नया मोड़ आ गया। रिपोर्ट लिखाने वाली महिला सिपाही और पंकज ने बुधवार को चौक स्थित आर्य समाज मंदिर में शादी कर ली। इसके शादी की फोटो भी वायरल कर दी।

पुलिस का कहना है कि महिला सिपाही का 164 के तहत बयान होगा। उसके बाद ही मामले में एफआर लगाई जाएगी। पासपोर्ट सेल में तैनात महिला सिपाही ने कुछ दिन पहले एसएसपी के फोटोग्राफी सेल में तैनात सिपाही पंकज यादव के खिलाफ कर्नलगंज थाने में दुष्कर्म की रिपोर्ट दर्ज कराई थी। उसका आरोप था कि पंकज ने उससे दोस्ती की और घर आने जाने लगा। एक दिन पुलिस लाइन स्थित क्वार्टर पर पंकज ने नशीली कोल्ड ड्रिंक पिलाकर उसके साथ दुष्कर्म किया। वीडियो भी बनाया। उसने शादी का वादा किया तो वह चुप रह गई। बाद में पंकज शादी के वादे से मुकर गया। महिला सिपाही ने काफी प्रयास किया लेकिन पंकज नहीं माना तो उसने कर्नलगंज थाने में दुष्कर्म समेत कई धाराओं में रिपोर्ट दर्ज करा दी। इसके बाद पंकज फरार हो गया। पुलिस उसके पैत्रिक घर गाजीपुर भी गई लेकिन उसका कुछ पता नहीं चला था। बुधवार को दिन में महिला सिपाही और पंकज की शादी के फोटो वायरल हुए तो पता चला कि दोनों ने आज चौक स्थित आर्य समाज मंदिर में शादी कर ली। महिला सिपाही और पंकज ने अभी कोई बयान नहीं दिया है। दूसरी ओर इंस्पेक्टर कर्नलगंज सुरेश सिंह ने बताया कि शादी से एफआईआर में कोई फर्क नहीं पड़ेगा। गुरुवार को महिला सिपाही का 164 का बयान होना है। अगर वह पंकज के पक्ष में बयान देती है तो एफआर लगा दी जाएगी।

15 दिन के भीतर क्षतिग्रस्त मार्गों एवं क्षेत्रों में पैचिंग, जलभराव एवं ड्रेनेज संबंधित कार्य पूर्ण ना होने पर होगी कड़ी कार्यवाही

प्रयागराज। अत्यधिक वर्षा होने के कारण जनपद की क्षतिग्रस्त सड़कों के मरम्मत कार्यों की धीमी गति एवं उनमें जलभराव को रोकने हेतु जल निकासी की संपूर्ण व्यवस्था ना होने के दृष्टिगत मंडलायुक्त संजय गोयल ने आज कार्यालय में सभी संबंधित विभागों की समीक्षा बैठक करते हुए खासी नाराजगी व्यक्त की। उन्होंने लोक निर्माण विभाग, प्रयागराज विकास प्राधिकरण, नगर निगम एवं अन्य संबंधित विभागों के उपस्थित अधिकारियों को फटकार लगाते हुए सभी क्षतिग्रस्त मार्गों एवं क्षेत्रों का चिन्ही करण कर 24 घंटे के अंदर एक सूची बनाकर उनके समक्ष प्रस्तुत करने के निर्देश दिए। बैठक में मंडलायुक्त ने नगर आयुक्त, रवि रंजन की अध्यक्षता में एक विशेष टीम का गठन कर किन छतिग्रस्त क्षेत्रों में किस तरह की मरम्मत की आवश्यकता है एवं वह कैसे किया जाएगा इसकी कार्य योजना समेत आख्या शनिवार तक प्रस्तुत करने के भी निर्देश दिए हैं। बैठक में पुलिस महानिरीक्षक के पी सिंह, नगर आयुक्त, रवि रंजन, उपाध्यक्ष, प्रयागराज विकास प्राधिकरण, श्री अरविंद सिंह चौहान, मुख्य विकास अधिकारी, श्री शिपू गिरी समेत अन्य अधिकारी रहे।

आप कार्यकर्ताओं ने मटका फोड़ किया प्रदर्शन

अखंड भारत संदेश

जलजीवन मिशन योजना में घोटाले का आरोप

प्रयागराज। आम आदमी पार्टी (आप) कार्यकर्ताओं ने जल जीवन मिशन योजना में हजारों करोड़ घोटाले का आरोप लगाकर बुधवार को मटका फोड़ विरोध प्रदर्शन किया। साथ ही सरकार के खिलाफ नारेबाजी कर मामले की जांच सीबीआई से कराने की मांग की। पत्थर गिरजाघर के पास जिलाध्यक्ष डॉ. अल्ताफ अहमद की अगुवाई में जुटे आप कार्यकर्ताओं ने कहा कि उत्तर प्रदेश के जल शक्ति मंत्री डॉक्टर महेंद्र सिंह एवं विभाग से जुड़े अन्य अधिकारियों के द्वारा लगभग हजारों करोड़ रुपये का घोटाला जल जीवन मिशन योजना में किया गया है। मंत्री का यह घोटाला उनकी पार्टी के सांसद संजय सिंह के द्वारा खुलासा किया गया।

उन्होंने बताया कि मंत्री एवं उनके अधिकारियों नेपहले से ही ब्लैक लिस्टेड कंपनी रश्मि मैटेलिक्स से मटेरियल अधिक दामों में लिए गए। कंपनी द्वारा घटिया स्तर के पाइप बनाने का पुराना इतिहास रहा है। उन्होंने कहा किकेंद्रीय आर्थिक सूचना ब्यूरो ने अपनी जांच में पाया था की यह कंपनी फर्जी निवेश तथा फर्जी सेल्स कंपनियां बनाने में लिप्त रही है। मध्य प्रदेश, पंजाब, पश्चिम बंगाल समेत देश के आठ राज्यों व सेना के द्वारा इस कंपनी को भ्रष्टाचार एवं खराब गुणवत्ता के कारण पहले ही ब्लैक लिस्ट किया जा चुका है। इसके बावजूद यूपी के मंत्री और अधिकारी इस कंपनी से मिलीभगत कर घटिया स्तर का माल अधिक मूल्य में खरीदा।

विवेक सिंह, अंजनी मिश्रा, सर्वेश यादव, अताउल रहमान, नितिन सिंह पटेल, रमेश चंद्र, रिशु सिंह, इंद्रेश चंद्र, पूनम सिंह, मोहम्मद नसीम, सुल्ताना हनीफ, वीरेंद्र कुशवाहा, सुभाष भारतीय, मोहम्मद अब्बासी, श्रद्धा चौरसिया, सुष्मिता राघव, सानिया मिर्जा, पीयूष शुक्ला, विशाल यादव, चक्रधारी तिवारी बड़ी संख्या में आप के कार्यकर्ता मौजूद रहे।

आम आदमी पार्टी के नेताओं ने हजारों करोड़ घोटाले का आरोप लगा मटका फोड़ विरोध प्रदर्शन करते।

वेंडर्स ने सीखें प्रोक्योरमेंट पोर्टल्स की बारिकियां

इफको में किया गया वर्चुअल वेंडर मीट

अखंड भारत संदेश

इफको के वर्चुअल वेंडर मीट में शामिल वेंडर्स व इफको के वरिष्ठ अधिकारी

फूलपुर। इफको की फूलपुर इकाई में बुधवार को वर्चुअल वेंडर मीट का आयोजन वेबिनार के माध्यम से किया गया । जिसमें 400 वेंडर्स ने भाग लिया और प्रोक्योरमेंट पोर्टल से संबंधित विस्तृत जानकारी ली।

वेबिनार का स्वागत भाषण इकाई प्रमुख संजय कुदेसिया द्वारा दियनिदेशक आइ टी विभाग के वरिष्ठ कार्यकारी निदेशक एके गुप्ता ने उदघाटन भाषण द्वारा प्रोक्योरमेंट पोर्टल की बारीकियां बताई। कार्यक्रम का समन्वय संतोष शुक्ल(उप महाप्रबंधक,आई टी) ने किया।

पैनल में के मोहन राव, संयुक्त महाप्रबंधक (सामग्री), अरवेंद्र कुमार, उप महाप्रबंधक (क्रय), संतोष कुमार सिंह, उप महाप्रबंधक (लेखा) एवं अमिताभ मिश्र , संयुक्त महाप्रबंधक (आई टी) मुख्यालय से उपस्थित थे। पोर्टल का प्रेजेंटेशन गौरव गोपाल एवं योगेश साखरे ने दिया। वेंडर्स की सहभागिता को देखते हुए उक्त कार्यक्रम की अवधि भी बढ़ाई गई। वर्चुअल वेंडर मीट में देश के प्रत्येक कोने से लोग जुड़े रहे।

समाज के विरुद्ध अपराध है देह व्यापार, आरोपी सहानुभूति पाने के हकदार नहीं : हाईकोर्ट

प्रयागराज। इलाहाबाद हाईकोर्ट ने कहा है कि किसी को देह व्यापार के लिए मजबूर करना या जबरदस्ती देह व्यापार कराना समाज के विरुद्ध किया गया अपराध है। कोर्ट ने देह व्यापार कराने के आरोपी आकाश को जमानत पर रिहा करने से इंकार कर दिया है। कोर्ट ने कहा कि ऐसे अपराध के आरोपी सहानुभूति पाने के हकदार नहीं हैं। यह आदेश न्यायमूर्ति संजय कुमार सिंह ने आकाश की अर्जी पर दिया है।पुलिस व एंटी ह्यूमन ट्रैफिक यूनिट ने नोएडा गौतमबुद्ध नगर के एक गेस्ट हाउस पर छापा मारकर चार लड़कियों को छुड़ाया ।27 फरवरी 21 की घटना की 28 फरवरी को सेक्टर 24 थाने में प्राथमिकी दर्ज कराई गई। आधे दर्जन जबरन देह व्यापार कराने के आरोपियों को मौके से गिरफ्तार किया गया और जेल भेज दिया गया है। लड़कियों ने प्रेम जाल में फंसा कर देह व्यापार में ढकेलने का आरोप लगाया है। याची का कहना था वह निर्दोष है। एक हफ्ते पहले उसने गेस्ट हाउस में नौकरी ज्वाइन की है। वहां क्या होता है उसे नहीं मालूम। किंतु लड़कियों के बयान अपराध की गंभीरता का खुलासा करने वाले हैं। पुलिस ने चार्जशीट दाखिल कर दी है। बिहार, पश्चिम बंगाल, मुजफ्फरनगर की लड़कियों को झांसा देकर देह व्यापार में ढकेलने का आरोप है। कोर्ट ने जमानत देने से इंकार कर दिया।

पीडीए ने झूंसी में सील किए अवैध निर्माण मिस्त्री और मजदूर सामान छोड़ भागे

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज। पीडीए उपाध्यक्ष के निर्देश पर बुधवार को झूंसी इलाके में चार बड़े अवैध निर्माण सील किए गए। भवन स्वामियों को नोटिस जारी किया गया है। कार्रवाई से इलाके में खलबली मची रही। बिना मानचित्र निर्माण करा रहे भवन स्वामी तो मौके से हटे ही, मिस्त्री और मजदूर भी सामान छोड़कर भाग निकले। नवागत वीसी पीडीए अरविंद चौहान ने अवैध निर्माण रोकने और शमन कार्रवाई तेज करने के निर्देश दिए हैं। बुधवार को झूंसी इलाके में जोन पांच की जोनल अधिकारी एसडीएम शिवानी सिंह ने कटहुला गौसपुर से कार्रवाई शुरू की। यहां 1325 वर्ग मीटर क्षेत्रफल की जमीन पर बिना मानचित्र स्वीकृत कराए जा रहे व्यावसायिक निर्माण को सील किया गया। एसडीएम ने बताया कि निर्माण शमशाद बेगम करा रही थीं। झूंसी स्थित बधवा ताहिर में 580 वर्ग मीटर पर आरती देवी पत्नी गुलाब दुबे द्वारा कराए जा रहे आवासीय निर्माण को सील किया गया। कटका झूंसी में संजीव कुमार गुप्ता के करीब 345 वर्ग मीटर क्षेत्रफल में कराए जा रहे व्यावसायिक निर्माण को सील किया गया। वहीं अंदावा झूंसी में सावित्री देवी के करीब 967 वर्गमीटर क्षेत्रफल पर कराए जा रहे व्यावसायिक अवैध निर्माण को सील किया गया। जोनल अधिकारी एसडीएम शिवानी सिंह ने बताया कि निर्माण करा रहे लोग मौके पर नक्शा, अनुमति पत्र नहीं दिखा सके। सभी निमार्णों को अवैध मानकर सील कर नोटिस जारी किए गए। कार्रवाई में क्षेत्रीय अवर अभियंता बीएन सिंह, राजेश अग्रवाल के साथ पीडीए प्रवर्तन दल के कर्मचारी शामिल रहे।

सील किये गये अवैध निर्माण

बैंक आफ बड़ौदा के क्षेत्रीय कार्यालय में लगी भीषण आग, प्रबंधक का दफ्तर राख

अखंड भारत संदेश

प्रयागराज। टैगोर टाउन स्थित बैंक ऑफ बड़ौदा के क्षेत्रीय कार्यालय में बुधवार को आग लगने से सबकुछ खाक हो गया। एसी, कम्प्यूटर आदि सामानों के साथ बैंकिंग कागजात भी राख हो गए। आग इतनी भयावह थी कि उसे बुझाने में दमकल कर्मियों को पांच घंटे से भी अधिक वक्त लग गया। बताया जा रहा है कि आग शार्ट सर्किट से लगी है। बैंक की सुरक्षा टीम ने जांच शुरू कर दी है।भवन के भूमि तल पर एक निजी बैंक की शाखा है। प्रथम तल पर भी निजी बैंक का कार्यालय है। इसके अलावा बैंक ऑफ बड़ौदा का भी कार्यालय है। वहीं द्वितीय तल पर बैंक का क्षेत्रीय कार्यालय-1 एवं 2 का स्टॉफ बैठता है। इस तल पर अग्रणी बैंक प्रबंधक समेत बॉब के कई अन्य कार्यालय भी हैं। आग लगने से द्वितीय स्थिति कार्यालयों में सबकुछ जल गया है। स्थानीय लोगों ने भोर में चार बजे भवन से धुंआ निकलने की सूचना दी।इसके बाद भवन मालिक आंनद अग्रवाल ने बैंक के अफसरों को इसकी सूचना दी। अफसरों के पहुंचने से पहले करीब सवा चार बजे अग्नि शमन विभाग की टीम दमकल के साथ पहुंच गई थी लेकिन तब तक वहां से आग की लपटें निकलने लगी थीं। आग पर करीब 10 बजे तक काबू पाया जा सका। उप क्षेत्रीय प्रबंधक अजय श्रीवास्तव का कहना है कि कम्प्यूटर, फाइल आदि वस्तुएं जल गई हैं। आग शार्ट सर्किट से लगी है। बैंक की टीम जांच कर रही है।

नुकसान के आकलन के लिए आज आएगी टीम

आग लगने से एसी, कम्प्यूटर, प्रिंटर, फर्नीचर समेत कई कीमती सामान जल गए। इस नुकसान का आकलन बैंक के विशेषज्ञों की टीम करेगी। टीम यहां गुरुवार को आएगी।

प्रयागराज में अवैध खनन की उच्च स्तरीय जांच और कार्रवाई का हाईकोर्ट ने दिया आदेश

प्रयागराज। नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल, नई दिल्ली ने प्रयागराज में सिलिका सैंड के अवैध खनन की शिकायत पर कड़ा रुख अपनाया है। अधिकरण ने प्रयागराज के शंकरगढ़ और आसपास के इलाकों में अवैध सिलका खनन की उच्च स्तरीय जांच के आदेश दिए हैं। प्रयागराज के देवदास खत्री की अर्जी पर अधिकरण के चेयरमैन न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल, न्यायमूर्ति सुधीर अग्रवाल और विशेषज्ञ सदस्य डॉक्टर नागिन नंदा की तीन सदस्यीय पीठ ने केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड , स्टेट एनवायरमेंट इंपैक्ट एसेसमेंट अथॉरिटी और जिलाधिकारी प्रयागराज की संयुक्त कमेटी गठित कर मामले की जांच कर कार्रवाई करने का निर्देश दिया है। केंद्र और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड इसमें नोडल एजेंसी की तरह काम करेंगे।अधिकरण ने इन सभी एजेंसियों को अपने उच्च पदस्थ अधिकारियों को जांच के लिए नामित करने का निर्देश दिया है। कमेटी को 15 दिन के भीतर बैठक कर मौके पर जाकर निरीक्षण करना होगा। अधिकरण कहा है कि जांच कमेटी इस मामले से जुड़े सभी पक्षों से संपर्क करें और अपने वैधानिक अधिकारों का प्रयोग कर उपचारात्मक उपाय करें।

शहीद जवान का पार्थिव शरीर पहुंचा रामसहाईपुर गांव

छलक पड़े गांव वासियों के आंख से आंसू, डीएम एसपी शहीद के घर पहुंचकर दी श्रद्धांजलि

अखंड भारत संदेश

शहीद का पार्थिव शरीर रामसहाईपुर गांव पहुंचने पर छलक पड़े आसपास के लोगों के आंसू श्रद्धांजलि देने वालों का लगा रहा तांता।

कौशांबी, प्रयागराज। सिराथू तहसील क्षेत्र के रामसहाईपुर गांव निवासी नरेंद्र दिवाकर फौज में तैनात थे नक्सली हमले में ड्यूटी के दौरान दुश्मनों से मोर्चा लेते वक्त उन्हें गोली लग गई थी जिस पर फौज ने उन्हें इलाज के लिए अस्पताल में भर्ती कराया इलाज के दौरान नरेंद्र दिवाकर सैनिक शहीद हो गए हैं उनके शहीद हो जाने पर सेना के अधिकारियों ने मामले की जानकारी उनके परिजनों को फोन पर दी नरेंद्र दिवाकर के शहीद होने की जानकारी घर पहुंचते ही परिवार में कोहराम मच गया परिचित रिश्तेदारों का जमावड़ा उनके घर पर लग गया बुधवार की सुबह शहीद सैनिक नरेंद्र दिवाकर का पार्थिव शरीर उनके गांव रामसहाईपुर पहुंचा शहीद सैनिक का पार्थिव शरीर गांव पहुंचते ही मौके पर कोहराम मच गया हर व्यक्ति की आंखें नम थी जिलाधिकारी सुजीत कुमार पुलिस अधीक्षक राधेश्याम विश्वकर्मा जिला पंचायत अध्यक्ष प्रतिनिधि पूर्व ब्लाक प्रमुख जितेंद्र सोनकर सिराथू विधायक शीतला प्रसाद पटेल मंझनपुर विधायक लाल बहादुर सहित तमाम गणमान्य व्यक्ति अधिकारी मौके पर पहुंचे और शहीद सैनिक को सलामी दी है भारत माता की जयघोष के साथ शहीद सैनिक पंचतत्व में विलीन हो गया शहीद सैनिक के अंतिम दर्शन करने के लिए हजारों लोग मौके पर पहुँचे सभी आंखें नम थी लोगों ने शहीद सैनिक को पुष्प अर्पित किया ।

प्रतापगढ़ संदेश

विकलांग विधवा की सहायता करने पहुंचे यूथ कांग्रेस के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष

प्रतापगढ़। सदर विधान सभा क्षेत्र के ग्राम सभा गोड़े में कांग्रेस का एक प्रतिनिधि मण्डल पूर्व प्रत्याशी एवं यूथ कांग्रेस के पूर्व प्रदेश अध्यक्ष डॉ. नीरज त्रिपाठी एडवोकेट के नेतृत्व में गरीब असहाय विकलांग बेटा एवं उसकी विधवा पीड़ित माँ गीता सिंह के आवास पर पहुंच कर साथियों के सहयोग से 11 हजार रुपए आर्थिक सहायता दी गई एवं आगे भी यथासंभव मदद करने का आश्वासन दिया गया।

ज्ञातव्य हो कि विगत कुछ दिन पूर्व गीता सिंह का आवास बारिश की वजह से गिर गया। परिवार में उनका एक विकलांग बेटा है जो दोनों पैरों से पूर्ण रूप से विकलांग है। चलने में अक्षम है। परिवार की स्थिति बहुत ही नाजुक है। आज कांग्रेस का एक प्रतिनिधिमंडल डॉ. नीरज त्रिपाठी के नेत्तृत्व में पीड़ित परिवार के पास गए और उनकी आर्थिक मदद करते

हुए कहा कि जब भी मेरी जहां भी जरूरत होगी, आप एक फोन करेंगे तो हम सब आपके लिए हर संभव मदद करने के लिए उपलब्ध रहेंगे। डॉ.नीरज त्रिपाठी ने अपर जिलाधिकारी शत्रोहन वैश्य से फ़ोन पर वार्ता कर आवास एवं शौचालय दिलाए जाने का अनुरोध किया अपर जिलाधिकारी शत्रोहन वैश्य ने कहा कि मैं खुद गोड़े गांव जाकर विजिट करूंगा और हर संभव मदद करने का प्रयास करूंगा। कांग्रेस के प्रतिनिधि मंडल में मुख्य रूप से गोड़े निवासी उत्तर प्रदेश यूथ कांग्रेस के पूर्व प्रदेश महामंत्री संतोष सिंह, कांग्रेस सेवादल के जिलाध्यक्ष महेंद्र शुक्ला, जिला कांग्रेस कमेटी के पूर्व कोषाध्यक्ष डॉ. अजय सिंह, राम प्रताप सिंह, कांग्रेस सेवादल के प्रदेश सचिव प्रेम शंकर द्विवेदी, कांग्रेस सेवादल के उपाध्यक्ष राम रतन तिवारी, एनएसयूआई के जिलाध्यक्ष उत्सव भूषण पाल, देवमणि पांडेय एवं नूर आलम उपस्थित रहे।

प्रशिक्षण शिविर आज

प्रतापगढ़। 30प्र0 कांग्रेस कमेटी द्वारा प्रायोजित व जिला कांग्रेस कमेटी द्वारा आयोजित एक दिवसीय प्रशिक्षण शिविर 26 अगस्त 2021 को स्थानीय राधे पैलेस में प्रातः आठ बजे से प्रारंभ होगा। उक्त जानकारी देते हुए जिला कांग्रेस कमेटी अध्यक्ष डॉ0 लालजी त्रिपाठी ने बताया कि जिन प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण प्राप्त करना है उन्हें फ़ोन द्वारा सूचना दे दी गयी है।

जीआरपी के हत्थे चढ़ा शातिर, चोरी का सामान मिला

स्टेशन पर बेंच रहा था चोरी का गहना, मोबाइल

प्रतापगढ़। ट्रेनों में यात्रियों के गहने और मोबाइल उड़ाने वाला शातिर चोर इरफान आखिरकार मंगलवार को जीआरपी के हत्थे चढ़ गया। उसके पास से गहने और मोबाइल मिला है। जो चोरी का बताया जाता है।जानकारी के अनुसार उपनिरीक्षक वीरेंद्र कुमार, सिपाही पंकज और सतीश के साथ प्लेटफार्म चेकिंग पर थे। पता चला कि दो नम्बर पर कोई गहने और मोबाइल बेंच रहा है। शक होने पर पुलिस उसे पकड़कर थाने ले आई। जांच पड़ताल में पता चला कि उसके पास जो गहने और मोबाइल थे वे चोरी के थे। वह अमेठी गंगागंज का रहने वाला शातिर ट्रेन चोर इरफान था। एसओ हरिनाथ यादव ने बताया कि इरफान के खिलाफ प्रतापगढ़ जीआरपी, अमेठी और सांगीपुर थाने में कई आपराधिक मुकदमे दर्ज हैं जेल जा चुका है। उसके पास से चोरी की चांदी की पायल, कंगन,मोबाइल और नकदी मिली है।

ग्राहक सेवा केंद्र पर हुआ बवाल पीड़ित ने दी तहरीर

पट्टी, प्रतापगढ़। कोतवाली क्षेत्र के पुरानी पट्टी कस्बे के मुकेश कुमार सरोज ने पट्टी कोतवाली में तहरीर देकर बताया कि बुधवार की शाम पांच बजे उसकी दुकान पर दो अपराधी किस्म के लोग आए और मारपीट करने लगे और उसे मारते हुए काफी दूर तक ले गए वह अपनी दुकान छोड़कर कोतवाली आ गया पीड़ित ने मामले में आरोपियों पर कार्रवाई करने की मांग की है।

जहरीले जंतु के काटने से बालिका की मौत, परिजनों में मचा कोहराम

पट्टी, प्रतापगढ़। घर के अंदर सामान ढूंढ रही बालिका की उंगली में किसी जहरीले जंतु ने काट लिया। जिससे उसकी मौत हो गई जिससे घर मे कोहराम मच गया। सूचना पर पुलिस ने शव का पंचनामा कर पोस्टमार्टम के लिए जिला अस्पताल भिजवाया है।

पट्टी कोतवाली क्षेत्र के रामपुर बेला गांव की रहने वाली खुशी (11) वर्ष पुत्री सुरेश कुमार मंगलवार की शाम सात बजे घर का कुछ सामान ढूंढने के लिए नवनिर्मित घर के अंदर गई हुई थी। इस दौरान उसके दाहिने हाथ की उंगली में किसी विषैले जंतु ने काट लिया। वह चिल्लाते हुए बाहर भागी और परिजनों को इसकी जानकारी दी, परिजनों ने घर के अंदर काफी खोजबीन की लेकिन घर प्लास्टर ना होने के कारण वह जहरीले जंतु का कुछ पता नही चला, कुछ देर बाद जब उसकी हालत खराब होने लगी तो परिजन इलाज के लिए खुशी को सीएचसी पट्टी लाए जहां रात 11:00 बजे के आसपास चिकित्सकों ने उसे मृत घोषित कर दिया। जहां से परिजन शव घर लेकर चले उसके बाद इसकी सूचना पट्टी पुलिस को दी गई। सूचना पर पहुंची पुलिस ने शव का पंचनामा करके पोस्टमार्टम के लिए भिजवाया।

खुशी अपने तीन भाई अनुज कुमार, आदर्श व आदित्य के अलावा बहन राज केसरी, नैन्सी में सबसे छोटी थी। पिता सुरेश कुमार सफाई कर्मी का काम करता है। मां सुशीला देवी का रो रो कर बुरा हाल है। सबसे छोटी होने के कारण खुशी सभी भाई बहनों में सबकी लाडली थी। उसकी मौत से घर पर कोहराम मच गया। रिश्तेदारों के साथ आवास पर संवेदना जताने वालों का तांता लगा हुआ है। मां सुशीला का रो-रोकर बुरा हाल है।

मारपीट की घटना को लेकर तीन के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज

लालगंज, प्रतापगढ़। कोतवाली पुलिस ने मारपीट व जानलेवा धमकी तथा गालीगलौज की घटना को लेकर तीन लोगों के खिलाफ मुकदमा दर्ज किया है। स्थानीय कोतवाली के बेनीपुर निवासी केशवदत्त पाण्डेय ने दी गई तहरीर मे कहा है कि बीती उन्नीस अगस्त को उसका पुत्र सोमेश पाण्डेय खेत मे निराई कर रहा था। इसी दौरान वहां गांव के आद्या प्रसाद पाण्डेय व पंकज पाण्डेय तथा शिवम पाण्डेय पहुंच गये। पीडित के बेटे सोमेश को गाली देते हुए उसे मारने पीटने लगे। शोर मचाने पर आरोपियों ने जानलेवा धमकी देते हुए चले गये। पुलिस ने तहरीर के आधार पर आद्या प्रसाद समेत तीन आरोपियो के खिलाफ मारपीट व गालीगलौज व धमकी का केस दर्ज किया है।

राष्ट्रीय लोक अदालत का आयोजन 11 सितम्बर को

प्रतापगढ़। सचिव, जिला विधिक सेवा प्राधिकरण नीरज कुमार त्रिपाठी ने बताया है कि उ0प्र0 राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण के निर्देशानुसार एवं संजय शंकर पाण्डेय जनपद न्यायाधीश/अध्यक्ष जिला विधिक सेवा प्राधिकरण के आदेशानुसार 11 सितम्बर 2021 दिन शनिवार को प्रातः 10 बजे से जनपद मुख्यालय के साथ ही साथ समस्त तहसील मुख्यालयो पर राष्ट्रीय लोक अदालत का आयोजन किया गया है। इस राष्ट्रीय लोक अदालत में विशेष रूप से आपराधिक शमनीय वाद, धारा-138 पराक्रम्य लिखित अधिनियम वाद, बैंक वसूली वाद, मोटर दुर्घटना प्रतिकर याचिकाएं, पारिवारिक वाद, श्रम वाद, भूमि अधिग्रहण वाद, विद्युत एवं जल बिल विवाद (चोरी से सम्बन्धित विवादों सहित), सर्विस में वेतन सम्बन्धित विवाद एवं सेवानिवृत्ति लाभो से सम्बन्धित विवाद, राजस्व वाद, अन्य सिविल वाद (किराया, सुखाधिकार, व्ययादेश, विशिष्ट अनुतोष वाद) आपसी सुलह समझौते के आधार पर निस्तारित हो सकने वाले समस्त प्रकार के वादों का निस्तारण किया जायेगा। वादकारी अपने सम्बन्धित न्यायालय में सम्पर्क कर अपने वादों को राष्ट्रीय लोक अदालत हेतु सन्दर्भित कराकर लोकर अदालत का लाभ उठायें।

शहर में जाम से मुक्त कराने के लिये व्यापारी और क्षेत्राधिकारी में बनी सहमति

श्याम बिहारी गली में व्यापारी सुरक्षा प्रकोष्ठ की बैठक सम्पन्न

प्रतापगढ़। उत्तर प्रदेश उद्योग प्रतिनिधि मंडल के नेतृत्व में शासन द्वारा प्रदत्त व्यापारी सुरक्षा प्रकोष्ठ की एक बैठक जिलाध्यक्ष राजेन्द्र कुमार केसरवानी की अध्यक्षता में श्याम बिहारी गली माँ दुर्गा माता मंदिर के प्रांगण में हुआ।

बैठक में व्यापारियों के सुरक्षा की समस्याएं एवम सुझावों से अवगत होने के लिए प्रशासन की ओर से पुलिस उपाधीक्षक (नगर) अभय कुमार पांडेय, प्रभारी निरीक्षक कोतवाली रविन्द्र नाथ राय, चौकी इंचार्ज विवेक कुमार मिश्र मकन्दरूगंज, अपनी टीम सहित उपस्थित हुए। व्यापारियों ने अपनी प्रमुख समस्याएं पुलिस उपाधीक्षक के सामने रखी जिसमें ई-रिक्शा से ट्रैफिक समस्याओ का निदान हेतु, पुलिस गश्त में और अधिक चौकसी के संबंध में, वाहन चालान के समस्या हेतु, रात्रि में संदिग्ध व्यक्तियों के एकत्रित हो

कर नशा खोरी के संबंध में व ठेलो के जमाबडो को नियंत्रित करने के संबंध में प्रमुख रही। इस पर क्षेत्राधिकारी ने कहा कि पुलिस संदिग्ध व्यक्तिओं पर अविलंब कार्यवाही करेगी। ई-रिक्शा का रूट निर्धारित कर जाम मुक्त कराएगी। सुरक्षा की दृष्टि से पुलिस गश्त में सिपाहियों व चीता मोबाइल बढ़ायेगे। वाहन चालान में भी समुचित बदलाव आएंगे। नए ठेलो वालों को समयानुसार लगाने हेतु छूट दी जाएगी। इस दौरान जिलाध्यक्ष राजेन्द्र केसरवानी ने उपस्थित समस्त प्रशासनिक व व्यापारियों का आभार व्यक्त किया। बैठक में लखन बाबा, संजय सोनी, राधेश्याम सोनी, अश्विनी केसरवानी, प्रह्लाद खंडेलवाल, सतीश सोनी, अमित केसरवानी, दूधनाथ सोनी, रामचंद्र सोनी, मुन्ना सोनी, सुभाष सोनी, अभिषेक सोनी, आशीष गुप्ता, अब्दुल खदुल, सरदार कुलदीप सिंह, संजय जैन, सरदार लवली सिंह अर्पित खंडेलवाल, राम औतार सोनी, गंगाराम सोनी, मूलचंद्र सोनी, मक्खन सोनी, सुरेश सोनी, सतीश चंद्र सोनी, संतलाल सोनी, अंकुश सोनी, घनश्याम सोनी, आदि पदाधिकारी व व्यापारीगण उपस्थित थे।

64 हजार के 55 टिकट के साथ दो गिरफ्तार

साइबर कैफे की आड़ में हो रहा था टिकट का कारोबार

प्रतापगढ़। मान्धाता इलाके में साइबर कैफे की आड़ में अवैध तरीके से ई टिकट का कारोबार करने वाले दो शातिरों को पकड़ने में आरपीएफ को सफलता मिली है। पुलिस को दोनों के पास से 64 हजार के 55 टिकट मिले हैं। मोबाइल और लैपटॉप को जब्त कर लिया गया है।

मान्धाता मोड़ के पास बृजेश मौर्य की साइबर कैफे पर मंगलवार को पहुंची आरपीएफ ने जांच शुरू की। भूतकाल के 18 ई टिकट मिले। जिसकी कीमत 28 हजार रुपये थी। आरपीएफ ने बृजेश को गिरफ्तार कर लिया। आरपीएफ ने दूसरी दबिश देल्हुपुर बाजार में अर्नव साइबर कैफे में दी। अनजीत मौर्य निवासी चंघईपुर को गिरफ्तार किया। दुकान से 37 टिकट भूतकाल के मिले। जिसकी कीमत 36 हजार रुपये है। आरोप है कि दोनो लोग अवैध तरीके से टिकट बनाते थे। यात्रियों को दो से तीन सौ अधिक रुपये में बेचने का काम करते थे। इनके पास से लैपटॉप और मोबाइल मिला है। जिसमें सारे रिकॉर्ड है। इस कार्यवाई में सब इंस्पेक्टर मंजीत डबास, धर्मेंद्र प्रताप सिंह और चिंटू सिपाही शामिल थे। दोनो के खिलाफ रेलवे एक्ट का मुकदमा पंजीकृत किया गया।

सकुशल सम्पन्न हुई सीबीएसई बोर्ड की पुर्नपरीक्षा

लालगंज, प्रतापगढ़। नगर क्षेत्र के अझारा स्थित पं. नागेश दत्त पब्लिक स्कूल मे बुधवार को सीबीएसई बोर्ड कक्षा बारह के अंग्रेजी विषय की प्राइवेट पुर्नपरीक्षा सम्पन्न हुई। विद्यालय मे आयोजित हुई सीबीएसई बोर्ड के अंग्रेजी विषय की कक्षा बारह की इस परीक्षा मे कुल एक सौ चार परीक्षार्थी नामांकित थे। लेकिन इक्तीस परीक्षार्थी परीक्षा मे अनुपस्थित रहे। विद्यालय के प्रधानाचार्य एसएन त्रिपाठी ने बताया कि कुल तिहत्तर बच्चों ने परीक्षा दिया। कोविड गाइडलाइन के अनुसार बोर्ड परीक्षा सकुशल सम्पन्न हुई।

पंचायत कर्मियों की लापरवाही दे रही दुर्घटना को दावत

पट्टी, प्रतापगढ़। पट्टी कस्बे में क्रेन वाहन से बिना सुरक्षा कीट के काम करते हुए पंचायत कर्मी अक्सर देखे जाते हैं जिससे यह लापरवाही उनकी जान का दुश्मन भी बन सकती हैं लेकिन महकमा इस संबंध में कोई भी ध्यान नहीं दे रहा है। बुधवार को विद्युत सप्लाई चालू होने के बावजूद भी पंचायत कर्मी क्रेन वाहन पर चढ़कर काम करते हुए दिखाई दिए नगर वासियों का कहना है कि किसी दिन इससे किसी पंचायत कर्मी की जान भी जा सकती है।

पुलिस की छापेमारी मे पचास लीटर अवैध शराब बरामद, एक गिरफ्तार

लालगंज, प्रतापगढ़। सांगीपुर पुलिस ने छापेमारी के दौरान पचास लीटर अवैध शराब के साथ एक आरोपी को धर दबोचा। आरोपी के खिलाफ मुकदमा दर्ज कर उसे जेल भेज दिया गया। सांगीपुर थाना के दरोगा अश्विनी कुमार पटेल को मंगलवार की रात मुखबिर से सूचना मिली कि पचखरा गांव मे एक व्यक्ति अवैध शराब का बड़े पैमाने पर कारोबार करता है। दरोगा ने पुलिस के साथ पचखरा निवासी लाल बहादुर सिंह पुत्र बलकरन सिंह को गिरफ्तार कर लिया।

पुलिस ने आरोपी के घर से पचास लीटर अवैध शराब की खाली शीशियां व ढक्कन तथा लेबल आदि को बरामद किया है।

दरोगा ने बताया कि आरोपी के खिलाफ आबकारी अधिनियम की धारा के अंर्तगत मुकदमा दर्ज कर बुधवार को उसे जेल भेज दिया गया। उधर थाना कुण्डा से उ0नि0 शिव प्रसाद रावत मय हमराह द्वारा देखभाल क्षेत्र/चेकिंग के दौरान मुखबिर खास की सूचना पर थाना क्षेत्र के हरनामगंज रेलवे स्टेशन क्रासिंग के पास से 02 व्यक्तियों दिनेश कुमार पुत्र कड़ेदीन निवासी गोतनी थाना मानिकपुर व नानभईया पुत्र मोतीलाल निवासी टिकरू थाना हथिगवां को 20-20 लीटर की पिपिया में अवैध कच्ची शराब के साथ गिरफ्तार किया गया। उक्त बरामदगी के संबंध में थाना स्थानीय पर मु0अ0सं0 292/2021 धारा 60 आबकारी अधिनियम का अभियोग पंजीकृत किया गया।

बाइक चोरी की दो घटनाओं की शिकायत पुलिस से

पट्टी, प्रतापगढ़। दो अलग अलग स्थानों पर बाइक चोरी की घटनाओ की शिकायत पुलिस से की गई है। कोतवाली क्षेत्र के नन्दईपुर गांव के रहने वाले राम बरन यादव ने पुलिस को लिखित शिकायती प्रार्थना पत्र देकर आरोप लगाया है कि वह मंगलवार की शाम चार बजे सामान की खरीददारी करने के लिए दिन में उडैंयाडीह बाजार आया हुआ था। इस दौरान वह चौराहे पर अपनी बाइक खड़ी करके सामान खरीदने दुकान पर चला गया, वापस लौट कर आया तो बाइक नहीं थी जिसकी खोज हर संभावित स्थानों पर की लेकिन जब बाइक का कुछ पता नहीं चल सका वह बुधवार को दोपहर में पट्टी कोतवाली आकर अज्ञात चोरों के खिलाफ तहरीर दिया। इसी तरह पट्टी कोतवाली क्षेत्र के कोहरांव गांव निवासी राधेश्याम तिवारी अपनी हीरो बाइक लेकर पट्टी तहसील मुख्यालय किसी काम से आया हुआ था। सामान लेने के लिए बाइक खड़ी करके चला गया कुछ देर के बाद आने पर उसकी बाइक नदारद देख वह दंग रह गया। काफी खोजबीन करने के बाद जब बाइक नहीं मिली तो पीड़ित ने अज्ञात चोरों के खिलाफ कोतवाली में तहरीर दी है फिलहाल पुलिस मामले में जांच पड़ताल कर रही है।

रंजिश में अधेड़ को आरोपियों ने पीटा

पट्टी, प्रतापगढ़। पुरानी रंजिश में अधेड़ की पिटाई थाने पर की गई पीड़ित ने नामजद शिकायत पुलिस से किया है। पट्टी कोतवाली क्षेत्र के रायपुर गांव के रहने वाले भगवानदीन पुत्र बुद्धिराम ने लिखित शिकायत देकर आरोप लगाया है कि कुछ दिन पूर्व बारात के दौरान दो पड़ोसी से उनका विवाद हो गया था जिससे आरोपी रंजिश रखता था।

अजगरा मेला महोत्सव कराए जाने को लेकर उठी मांग

लालगंज, प्रतापगढ़। अजगरा मेला महोत्सव के आयोजन कराए जाने को लेकर अजगरा निवासी एवं अजगरा पुरातात्विक संग्रहालय के संस्थापक राजेश कुमार पाण्डेय निर्झर प्रतापगढ़ी ने जिलाधिकारी को प्रार्थना पत्र के जरिए निर्झर ने कहा है कि कोरोना महामारी के कारण बीते वर्ष यहां अजगरा मेला महोत्सव का आयोजन नही हो सका था। यहां यह मेला प्रतिवर्ष आयोजित होता है। भाद्रमास की ऋषि पंचमी तिथि को यहां प्रतिवर्ष मेले के आयोजन को लेकर इसके पुरातात्विक प्रमाण भी मिलते हैं। यहां मिले ब्राह्मी लिपि मे लिखे गये प्रस्तर लेखों मे अजगरा मेले की प्रमाणिकता की प्राचीनता मिलती है।

संदिग्ध दशा में फांसी के फंदे से लटककर छात्र ने दी जान, परिजनों में मचा कोहराम

लालगंज, प्रतापगढ़। संदिग्ध परिस्थितियों मे छात्र की फांसी से मौत को लेकर परिजनो मे कोहराम मच गया। सूचना पर पहुंची लालगंज कोतवाली पुलिस ने शव को कब्जे मे लेकर पंचनामा कर उसे पीएम के लिए भेज दिया। घटना को लेकर मृतक के चाचा ने पुलिस को इत्तेफाकिया तहरीर दी है। लालगंज कोतवाली क्षेत्र के परमा का पुरवा कोठार मंगोले निवासी हेमन्त कोरी 20 पुत्र राजेन्द्र कुमार कोरी क्षेत्र के एक आईटीआई कालेज मे छात्र था। पारिवारिकजनों के अनुसार मंगलवार की रात वह खाना खाने के बाद कमरे मे सोने चला गया। कुछ देर बाद उसके चाचा मिटठूलाल उसके कमरे के पास पहुंचे तो दरवाजा बंद मिला। आवाज देने के बाद भी जब हेमन्त ने दरवाजा नही खोला तो चाचा ने सीढ़ी के सहारे कमरे मे देखा तो उसके होश उड़ गये। कमरे मे फांसी के फंदे से हेमन्त झूलता हुआ मिला। शोर सुनकर परिवार व गांव के लोग भी इकटठा हो गये। सूचना पर पुलिस पहुंची और उसने किसी तरह दरवाजा खुलवाया तथा फांसी से लटक रहे हेमंत को नीचे उतारा। किंतु उसकी मौत हो चुकी थी। पुलिस ने शव का पंचनामा कर पीएम के लिए भेज दिया। दरोगा जावेद का कहना है कि शव को पीएम के लिए भेजवाया गया है। प्रथम दृष्टया मामला आत्महत्या का लग रहा है। मृतक के चाचा ने इत्तेफाकिया मौत की तहरीर दी है। घटना से परिजनों में कोहराम मचा हुआ है।

खाद्य विभाग ने किया दुकानों का निरीक्षण

पट्टी, प्रतापगढ़। बुधवार को पट्टी नगर और अमरगढ़ में खाद्य सुरक्षा अधिकारी प्रदीप कुमार राय के नेतृत्व में दो दुकानों का निरीक्षण किया गया और अमरगढ़ बाजार में अरहर की दाल की दुकान में खाद्य सामग्री की गुणवत्ता खगाली गई सप्लाई स्पेक्टर प्रदीप कुमार राय ने बताया कि बाजारों में दूषित पदार्थ दुकानदार ना बेचने पाए इसके लिए प्रशासन की तरफ से कवायद चल रही है जिसके तहत यह जांच की जा रही है।

परिषदीय विद्यालय : प्रादेशिक क्विज प्रतियोगिता में प्रतिभाग कर रहे 80 फीसद बच्चे

बीईओ की अगुवाई में हुई बैठक, शिक्षकों ने पठन-पाठन पर की चर्चा

अखंड भारत संदेश

ज्ञानपुर। मिशन प्रेरणा को प्रभावी और उद्देश्यपूर्ण बनाने की नीयत से आज ज्ञानपुर के परशुरामपुर संकुल की बैठक हुई। संकुल शिक्षकों, प्रधानाध्यापकों की इस बैठक की अगुवाई बीईओ रवींद्र शुक्ल ने की। कंपोजिट विद्यालय सिंहपुर में हुई बैठक में बीईओ सहित सभी शिक्षकों ने मिशन प्रेरणा पर विस्तार से चर्चा की। खंड शिक्षाधिकारी रवींद्र शुक्ल ने समस्त संकुल शिक्षकों एवं प्रधानाध्यापकों से मिशन प्रेरणा के सभी महत्वपूर्ण कार्यक्रमों को कोविड-19 की गाइडलाइन के तहत चलाने के लिए प्रोत्साहित किया।

बीईओ ने कहा कि प्रेरणा लक्ष्य सूची, तालिका के व्यावहारिक रूप पर ध्यान देना जरूरी है ताकि मिशन प्रेरणा के विभिन्न कार्यक्रमों से बच्चों को लाभांवित किया जा सके। एआरपी, हिंदी डा. पूजा मिश्रा ने अगस्त में पूर्ण किए जाने वाले प्रत्येक बिंदु पर विस्तार से चर्चा की। एआरपी गणित संदीप कुमार दुबे द्वारा उच्च प्राथमिक और प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों द्वारा मिशन प्रेरणा के तहत विकसित किए गए माड्यूल पर ध्यानाकर्षण कराया। उन्होंने माड्यूल आधारित शिक्षण कार्य पर विस्तार से प्रकाश डाला।

नोडल संकुल शिक्षक प्रतीक मालवीय ने अगस्त माह में न्याय पंचायत परशुरामपुर के सभी विद्यालयों की प्रगति रिपोर्ट साझा की, जिसमें न्याय पंचायत परशुरामपुर के सभी संकुल शिक्षकों के द्वारा अगस्त माह का डीसीएफ 100 फीसद भरा जाना शनिवार को प्रत्येक विद्यालय में 80 प्रतिशत से अधिक बच्चों के द्वारा प्रत्येक शनिवार को प्रादेशिक क्विज प्रतियोगिता में प्रतिभाग कराना, न्याय पंचायत के सभी विद्यालयों में दो-तीन स्थानों पर मोहल्ला कक्षाओं का संचालन किए जाने की जानकारी दी। बैठक के दौरान न्याय पंचायत परशुरामपुर के संकुल शिक्षक कमलेश शुक्ला, अजीत राय, मनोज यादव और सौम्या श्रीवास्तव, कंपोजिट विद्यालय सिंहपुर ज्ञानपुर की प्रधानाध्यापिका संध्या गोयल और विद्यालय के सभी शिक्षक और शिक्षिकाओं ने खंड शिक्षा अधिकारी को न्याय पंचायत में विकसित शिक्षण अधिगम सामग्री और चल रहे विभिन्न कार्यक्रमों से अवगत कराते हुए पुस्तकालय की जानकारी प्रदान की। अंत में न्याय पंचायत परशुरामपुर की ओर से और विद्यालय की प्रधानाध्यापिका के द्वारा खंड शिक्षा अधिकारी को स्मृति चिन्ह प्रदान किया गया। बैठक में शिक्षकों की सक्रियता, शिक्षा के प्रति सजगता की बीईओ ने खूब सराहना की।

बीईओ ने दिया कंपोजिट विद्यालय बेजवां में एलईडी टीबी

अखंड भारत संदेश

घोसिया। औराई क्षेत्र अन्तर्गत कंपोजिट विद्यालय बेजवां में स्कूल पुनः खुलने पर एक कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि उद्योगपति व समाजसेवी राजेन्द्र सिंह व विशिष्ट अतिथि खंड शिक्षा अधिकारी औराई आशीष मिश्रा, दिगम्बर पटेल, जिला पंचायत सदस्य सूबेदार यादव, अध्यक्ष प्राथमिक शिक्षक संघ रहे। मुख्य अतिथि व विशिष्ट अतिथि द्वारा विद्यालय के दो कक्षों का स्मार्ट कक्ष दो एलईडी टीबी का उद्घाटन किया गया। इस दौरान मुख्य अतिथि राजेन्द्र प्रसाद सिंह द्वारा तत्काल पांच हजार एक सौ रुपये का सहयोग किया गया और भविष्य में हमेशा सहयोग करने का वादा किया। किसी विद्यालय में पहली बार किसी खंड शिक्षा अधिकारी द्वारा एक कक्ष को स्मार्ट कक्ष बनाने के लिए एक एलईडी टीबी देने की घोषणा की गयी। विद्यालय के प्रधानाध्यापक समरबहादुर पटेल ने अतिथि जनों को धन्यवाद व आभार ज्ञापित किया।

छात्रों ने लिया जरूरतमंदों के सहयोग का संकल्प

डा. श्यामा प्रसाद मुखर्जी राजकीय महाविद्यालय में मनोवैज्ञानिक परामर्श सत्र का आयोजन

अखंड भारत संदेश

भदोही। डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी राजकीय महाविद्यालय भदोही में मिशन शक्ति के अंतर्गत महिला अध्ययन केंद्र राष्ट्रीय सेवा योजना और रोवर्स रेंजर्स के संयुक्त तत्वाधान में महाविद्यालय की छात्राओं के लिए मनोवैज्ञानिक परामर्श सत्र का आयोजन किया गया। महिला अध्ययन केंद्र की प्रभारी डॉ श्वेता सिंह ने बताया कि परामर्श सत्र का शुभारंभ प्राचार्य प्रो. डॉ मुरलीधर राम ने किया।

इस मौके पर प्राचार्य ने छात्राओं को मानसिक रूप से मजबूत बनने और संदेह, भय, तनाव, डिप्रेशन, नकारात्मक विचारों से दूर रहने के लिए प्रेरित किया। इसके लिए उन्होंने सकारात्मक विचार अपनाने और सकारात्मक कार्य करने का आह्वान किया। उन्होंने जरूरतमंद लोगों की मदद करने का संकल्प दिलाया। परामर्श सत्र में काउंसलर दल में डॉ माया यादव, डॉ श्वेता सिंह, डॉ भावना सिंह, ऋत्विक रंजन सिंह, डॉ अंकिता तिवारी, सुश्री पूनम द्विवेदी और सुश्री शिखा तिवारी शामिल रही। उन्होंने छात्राओं की व्यक्तिगत, सामाजिक, शारीरिक, पारिवारिक और पढ़ाई से संबंधित समस्याएं सुनी और उनका यथासंभव निराकरण करने का प्रयास किया। काउंसलर दल ने मन को शांत करने के लिए और शरीर को स्वस्थ रखने के लिए योग प्राणायाम, आसन एक्सरसाइज इत्यादि के साथ पौष्टिक भोजन करने की सलाह दी। भोजन में हरी पत्तेदार सब्जियां मौसमी फल गुड नींबू इत्यादि अवश्य शामिल करने के लिए प्रेरित किया। काउंसलर्स ने अपने लक्ष्य प्राप्ति के लिए रोजाना कम से कम 2 घंटे अध्ययन करने मन लगाकर अध्ययन करने की नसीहत भी दी। इस अवसर पर राष्ट्रीय सेवा योजना के कार्यक्रम अधिकारी बृजेश कुमार, डॉ अनीश कुमार मिश्र, रोवर्स प्रभारी डॉ रुस्तम अली, डॉ यशवीर सिंह, डॉ गौतम गुप्ता, डॉ अनुराग सिंह, डॉ राजकुमार सिंह यादव, डॉ आशुतोष कुमार श्रीवास्तव, डॉ अमित तिवारी सहित पूरा महाविद्यालय परिवार उपस्थित रहा।

जिला अस्पतालः बढ़ रहा है वृहद हस्ताक्षर अभियान का कारवां

अखंड भारत संदेश

ज्ञानपुर। भदोही मांगे जिला अस्पताल के लिए युवा नेता डीएम सिंह गहरवार द्वारा चलाए जा रहे वृहद हस्ताक्षर अभियान का कारवां बुधवार को नगर में पहुंचा। इसके साथ ही गोपीगंज व डीघ विकास खंड के कुछ गांवों में भी अभियान से जुड़े लोगों ने पहुंचकर लोगों से हस्ताक्षर करवाया।युवा नेता डीएम सिंह गहरवार द्वारा शुरू की गई इस अभियान का लोगों का भरपूर सहयोग व समर्थन मिल रहा है। अभियान से जुड़े लोग बाजारों में पहुंचकर लोगों से इसके लिए सहयोग मांग रहे और इसके लिए हस्ताक्षर करा रहे हैं। जगह-जगह चौपाल भी लगाया जा रहा। इसके साथ ही पदयात्रा कर लोगों को अपने हक और अधिकार के प्रति जागरूक किया जा रहा है। इस दौरान श्री सिंह ने वर्तमान जनप्रतिनिधियों को आड़े हाथों लिया और कहा कि भदोही में जिला अस्पताल का निर्माण न होना उनके निष्क्रियता का परिचायक है। अगर जनप्रतिनिधियों द्वारा धरातल पर काम किया गया होता तो कब का ही जिला अस्पताल का निर्माण हो गया होता। उन्होंने कहा कि जिले के स्वास्थ्य व्यवस्था में सुधार के लिए मेरी लड़ाई जारी रहेगी। इस मौके पर प्रदीप सिंह, शिव नरेश यादव, प्रवेश यादव, बड़े बहादुर, प्रभाकर, शिवम, घनघोर,अजय कुमार, शुभम, अभिषेक सिंह, सत्यप्रकाश, त्रिवेणी आदि प्रमुख रूप से मौजूद रहे।

वरुणा नदी पर बना पुल गड्ढों में तब्दील, जानलेवा हुआ आवागमन

अखंड भारत संदेश

सुरियावां। भदोही और जौनपुर सीमा को विभाजित करने वाली वरुणा नदी पर करोड़ों की लागत से बना पंडित दीनदयाल सेतु गड्ढे में तब्दील हो गया है। मीरगंज से सुरियांवा मार्ग पर बना यह सेतु दो जिलों को जोड़ता है। इस पुल पर से बड़े वाहनों का आवागमन जानलेवा साबित हो रहा है।

पुल का निर्माण दो जिलों के जोड़ने की मंशा से तत्कालीन भाजपा सरकार में लोक निर्माण मंत्री रहे पंडित कलराज मिश्र ने करवाया था। किंतु आज इस पुल की दशा दयनीय हो गई है। फिर भी लोग जान हथेली पर रखकर आवागमन करते हैं। उस समय क्षेत्रीय विधायक डा. पूर्णमासी पंकज (दिवंगत) अपने कार्यकाल में इस सेतु का निर्माण की मांग पर लोक निर्माण मंत्री ने करवाया था। पुल पर बने दोनों किनारे की जाली काटकर चोर उचक्के उठा ले गये। सुरियांवा से अभिया होते हुए मीरगंज, जरौना, जौनपुर जाने हेतु क्षेत्र का यही एकमात्र संपर्क मार्ग है। अपने जिले तक की सड़क ठीक-ठाक है परंतु जौनपुर की सीमा में घुसते ही सड़क की हालत दयनीय है। क्षेत्रीय नागरिकों ने जानलेवा बने गड्ढों को ठीक करवाने की मांग की है।

फ्रंट लाइन वर्कर सफाई कर्मीयो को मिला खाद्य व सुरक्षा सामाग्री

नपा कार्यालय मे पालिका अध्यक्ष ने वितरित किया किट

अखंड भारत संदेश

गोपीगंज। नगर पालिका परिषद कार्यालय में अध्यक्ष प्रह्लाद दास गुप्त द्वारा कोरोना काल मे फ्रंट लाइन वर्कर रहे सफाई कर्मियों को खाद्य व सुरक्षा किट प्रदान किया गया। किट में आटा, चावल, दाल, प्रोटीन, सरसों का तेल के साथ मास्क व अन्य सामान शामिल रहा। सामाजिक संस्था प्लान इंटरनेशनल कोविड काल मे फ्रंट लाइन वर्कर रहे 73 सफाई कर्मियों के लिए खाद्य व सुरक्षा कीट उपलब्ध कराया गया था।बुधवार को पालिका कार्यालय में उन्हें किट प्रदान करते हुए पालिका परिषद अध्यक्ष श्री गुप्त ने कहा कि कोविड काल के ऐसे दौर में जब लोग अपने घर से बाहर नही निकल रहे थे उस दौर में हमारे सफाई कर्मी पूरी जिम्मेदारी के साथ सफाई का मोर्चा सभाल रक्खा था। उनकी बदौलत ही नगर और क्षेत्र पूरी तरह संक्रमण मुक्त रहा।इस दौरान सफाई कर्मियों का सम्मान करने वाली संस्था की भी सराहना की। इस मौके पर अधिशासी अधिकारी अमिता सिंह, मंगला पांडेय, अचल श्रीवास्तव, आशीष यादव पिंटू आदि रहे।

चलो आईटीआई जागरूकता वैन को डीएम ने दिखाई झंडी

अखंड भारत संदेश

भदोही। जिलाधिकारी आर्यका अखौरी ने बुधवार को कलेक्टेट्रट से आईटीआई चलो से संबंधित जागरूकता वैन को हरी झंडी दिखाकर रवाना किया। इस दौरान उन्होंने बताया कि राजकीय औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान ज्ञानपुर-भदोही में प्रवेश सत्र अगस्त-2021 मे अभ्यर्थियों को प्रवेश हेतु ऑनलाइन आवेदन राज्य व्यावसायिक प्रशिक्षण परिषद् उ0प्र0 लखनऊ की वेबसाइट ूेबअजनचण्पद पद पर उपलब्ध है। इससे सम्बन्धित समस्त जानकारी के लिए जागरूकता वैन चलायी जा रही है। ऑनलाइन आवेदन 04 अगस्त, 2021 से प्रारम्भ हो गया है तथा आवेदन करने की अंतिम तिथि 28 अगस्त, 2021 निर्धारित है।

जिलाधिकारी ने बताया कि वर्तमान में संस्थान में संचालित व्यवसाय डी0एस0टी0 के फिटर, मशीनिष्ट, टर्नर, मैकेनिक मोटर व्हीकल, डीजल मैकेनिक व्यवसाय के लिये हाईस्कूल, विज्ञान, गणित सी0टी0एस0 व्यवसायों के अतिरिक्त अभ्यर्थियों/प्रशिक्षार्थियों को अति कुशल बनाने हेतु डी0एस0टी0 ; क्न्।स् ैलैज्म - ज्त्।छप्छप्ळ द्ध योजना के अन्तर्गत भी प्रशिक्षण देने का प्राविधान डी0जी0टी0 द्वारा उपलब्ध कराया गया है। इसी प्रकार आई0टी0आई0 ज्ञानपुर-भदोही में व्यवसाय विवरण-डी0एस0टी0 में फिटर के लिये शैक्षिक योग्यता हाईस्कूल, विज्ञान, गणित व वेल्डर के लिये कक्षा-8 उत्तीर्ण होना आवश्यक है। आई0टी0आई0 ज्ञानपुर-भदोही में ड्राफ्ट्समैन सिविल व फैशन डिजाइन टेक्नोलॉजी में शैक्षिक योग्यता हाईस्कूल, विज्ञान, गणित तथा ड्रेस मेकिंग के लिये हाईस्कूल शैक्षिक योग्यता निर्धारित है। उन्होंने बताया कि इस योजना के अर्न्तगत प्रवेशित प्रशिक्षार्थियों को संस्थानों में प्रशिक्षण देने के साथ-साथ व्यवसाय से सम्बन्धित कम्पनियों में भी प्रशिक्षण/प्रयोगात्मक कार्य प्रदान कराया जायेगा। जिससे उनकी कुशलता में और ज्यादा निखार आयेगा, तथा ज्यादा से ज्यादा रोजगार के अवसर सुलभ होगें।

जल जीवन मिशन में घोटाले की हो सीबीआई जांचःआप

अखंड भारत संदेश

ज्ञानपुर। आम आदमी पार्टी के कार्यकर्ताओं ने बुधवार को नगर के पाल चौराहे पर पहुंचकर प्रदेश सरकार के खिलाफ जमकर नारेबाजी की और वही पर मटका फोड़ा। उसके बाद आप कार्यकर्ता पार्टी जिलाध्यक्ष मनोज गुप्ता के नेतृत्व में जिला मुख्यालय पहुंचे। जहां पर प्रदर्शन कर राज्यपाल के नाम संबोधित ज्ञापन जिलाधिकारी को सौंपा।

इस दौरान पार्टी के जिलाध्यक्ष श्री गुप्ता ने कहा कि केंद्र सरकार द्वारा हर घर जल-हर घर नल पहुंचाने के लिए वित्तीय वर्ष 2020-21 में जल जीवन मिशन योजना के तहत राज्यों को एक लाख 20 हजार करोड़ रुपया का आवंटित किया गया था। किंतु, इस योजना के क्रियान्वयन में उत्तर प्रदेश सरकार के जल शक्ति मंत्री डॉ. महेंद्र सिंह एवं अन्य अधिकारियों के द्वारा लगभग हजारों करोड़ रुपया का भ्रष्टाचार किए जाने का मामला सामने आया है। उन्होंने कहा कि इसके कार्य की जिम्मेदारी 'रश्मि मटेलिक्स' नामक कंपनी को दिया गया है।

इस कंपनी का भ्रष्टाचार एवं निकृष्ट पाइप बनाने में लिप्त रहने का इतिहास रहा है। केंद्रीय आर्थिक सूचना ब्यूरो ने अपनी जांच में पाया कि यह कंपनी फर्जी निवेश तथा फर्जी शेल कंपनियां बनाने में भी लिप्त है। जबकि मध्य प्रदेश, पंजाब तथा पंश्चिम बंगाल समेत देश के 8 राज्यों तथा सेना के द्वारा इस कंपनी को भ्रष्टाचार एवं निम्न गुणवत्ता के कारण ब्लैक लिस्टेड किया हुआ है। लेकिन इसके बावजूद भी इस कंपनी को काम दे दिया गया। वहीं पार्टी के भदोही विधानसभा प्रभारी कलाधर दुबे केडी ने कहा कि प्रदेश सरकार के विरुद्ध मटका फोड़ा गया। इसके जरिए गूंगी व बहरी सरकार को जगाने की कोशिश की जा रही है।

सीईपीसी का लगातार बढ़ा रहा है दायरा : इम्तियाज

अखंड भारत संदेश

भदोही। सीईपीसी प्रशासनिक समिति के सदस्य पद् पर चुनाव लड़ रहे युवा कालीन निर्यातक इम्तियाज अंसारी ने कहा कि सरकार के बीच सामंजस्य स्थापित करने के लिए कालीन उद्योग से जुड़े हमारे आप के पूर्वजो वरिष्ठ लोगों द्वारा सीईपीसी की स्थापना किया था। जब पहली बार फेयर लगा था तो मात्र 100 स्क्वायर मीटर में कालीन मेला आयोजन हुआ था और मात्र 10 निर्यातकों ने भाग लिया था। लेकिन अभी पिछले कालीन मेले में 300 निर्यातक भाग लिये थे। 8 हजार स्क्वायर मीटर में मेला आयोजित हुआ। जिससे स्पष्ट है की सीईपीसी का उद्योग हित में महत्वपूर्ण योगदान है। लेकिन मुझे अफसोस है कि जिनके पूर्वजो वरिष्ठ जनो के सहयोग से आज सीईपीसी का दायरा यहां तक

पहुचा और लोग कहते है कि सीईपीसी ने क्या किया है। युवा निर्यातक ने कहा कि आज आवश्यकता मिल जुल कर उद्योग को आगे ले जाने की है। आलोचना करने या आरोप प्रत्यारोप से उद्योग का भला होने वाला नही है। उन्होंने यह भी कहा कि जरुरी नही उद्योग हित के लिए कोआ सदस्य ही होना जरुरी है। मै भी 8 वर्षो से उद्योग हित में काम कर रहा हूं। प्रदेश व केंद्र सरकार में बैठे मंत्रियों व अधिकारियों से भेट करना व पत्र के माध्यम से उद्योग की बात रखना आदि। खास यह की एक दुसरे के सहयोग भी लेता रहा हूं। युवा निर्यातक ने कहा कि उद्योग हित में कोई योजना है तो बिना कोआ सदस्य रहे ही सेवा कार्य हो सकता है। उन्होंने कहा कि हमारे पिता ने बुनाई करने से कार्य की शुरुआत किया था।तमाम संघर्ष रंगाई फिर कांट्रेक्टर की हैसियत से बुनाई फिर निर्यात शुरु किया और आज हम यहां तक पहुचे तो इसका श्रेय पिता जी को ही जाता है। युवा निर्यातक ने एकमा के फाउंडर सदस्यों हृदय नरायण शुक्ला पंडित गुलाब धर मिश्र नसरुल्लाह अंसारी मुस्तफा खां अशफाक हुसैन अशफाक वजीरी जुगल किशोर खन्ना राजकुमार सिंह एजाज खां आदि के प्रति आभार जताया।

वर्षा जल संचयन एवं भूगर्भ जल संवर्धन हेतु एक दिवसीय प्रशिक्षण संपन्न

अखंड भारत संदेश

भदोही । सुरियांवा विकासखंड के सभागार में बुधवार को जिला प्रशासन एवं वॉटरएड इंडिया द्वारा वर्षा जल संचयन एवं भूगर्भ जल रिचार्ज के लिए कार्यशाला आयोजित की गई। जिसमें मुख्य अतिथि खंड विकास अधिकारी नवीन कुमार गुप्ता रहे। इस कार्यशाला में खंड विकास अधिकारी ने कहा कि वर्षा जल संचयन की हर गांव मे 2 इकाई तैयार करने पर बल दिया गया। उन्होंने वर्षा जल संचयन के संबंध में मौजूद ग्राम प्रधानों को अवगत कराया।कार्यशाला में वॉटरएड इंडिया के कार्यक्रम समन्वयक कौशलेंद्र सिंह ने बताया कि जनपद भदोही का एवरेज रेनफॉल 1019 एम.एम. है, जो कि कई देशों प्रदेशों से बेहतर है। यदि जनपद में प्रति ग्राम पंचायत 4000 स्क्वायर फीट की छतों को जोड़कर वर्षा जल संचयन रीचार्ज पिट एवं कुएं के पास फिल्टर चेम्बर बनवाकर किया जाए तो लगभग साढ़े अठारह करोड़ वर्षा जल को रिचार्ज करने

की क्षमता जनपद विकसित कर सकेगा, और ऐसा कीर्तिमान स्थापित करने वाला भदोही प्रदेश का पहला जनपद होगा। हमारे देश में निरंतर घटते जलस्तर को बढ़ाने का एकमात्र उपाय प्रकृति द्वारा निशुल्क प्राप्त वर्षा जल का संग्रह करके ही किया जा सकता है अतः हम सभी को इस दिशा में महत्वपूर्ण एवं ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। जिसका जमीनी स्तर पर अपेक्षित परिणाम देख सके और भूगर्भ जल को रिचार्ज कर भविष्य को सुरक्षित करने की दिशा में एक सकारात्मक पहल की जा सके। इस प्रशिक्षण कार्यशाला में वर्षा जल संचयन की इकाई के निर्माण में तकनीकी बिंदुओं पर विस्तृत रूप से चर्चा की गई और भूमि के नीचे के जलभृतों की प्रकृति पर प्रकाश डाला गया। वर्षा के जल को भूमि में रिचार्ज करने से पूर्व यह सुनिश्चित होना अत्यंत आवश्यक है कि कहीं वह भूमिगत जलस्तर को प्रदूषित ना कर दें ऐसे में तकनीकी बिंदुओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है रिचार्ज गड्ढा एवं कुए पर इस प्रकार से निर्माण कार्य कराया जाए कि वह सीधे तौर पर भूमिगत जल स्तर को प्रदूषित ना कर पाए और भूगर्भ जल स्तर को बढ़ाने के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। उन्होंने बताया कि जनपद भदोही के दो विकासखंड ज्ञानपुर एवं भदोही सेंट्रल ग्राउंड वॉटर बोर्ड की रिपोर्ट के अनुसार क्रिटिकल जोन में एवं फेस 4 विकासखंड सेमी क्रिटिकल जोन में आते हैं इस लिहाज से भूगर्भ जल स्तर को बढ़ाने के लिए एक सामूहिक प्रयास की आवश्यकता है। इस अवसर पर ब्लॉक भदोही के ए.डी.ओ पंचायत राजनाथ, ब्लॉक प्रमुख प्रतिनिधि सचिन त्रिपाठी, प्रमोद पांडेय, श्रीकांत यादव, सहित ग्राम प्रधान एवं नायब धावक उपस्थित रहे।

सुरियावां ब्लॉक में आंगनबाड़ी केंद्र बना शो पीस

सुरियावां। सुरियांवा ब्लॉक के अंतर्गत विभिन्न गांव में संचालित आंगनबाड़ी केंद्र मात्र शोपीस साबित हो रहा है। परंतु विभागीय अधिकारी सब कुछ जानते हुए मौन साधे हुए हैं। सुरियांवा ब्लॉक में 145 आंगनवाड़ी केंद्र संचालित है। कई केंद्रों पर सहायिका का पद खाली पड़ा है। एक-एक सहायिका दो केंद्र चला रही हैं। परंतु उक्त खाली पड़े जगहों पर अभी तक नियुक्ति नहीं हो पाई है। केंद्रों पर सरकार द्वारा धात्री महिलाएं, बच्चों आदि को वितरण हेतु घी तेल दूध दाल पोषाहार एवं भोजन की व्यवस्था की गई है,।

सम्पादकीय

यह तो नाइंसाफी है!

देश भर की जिला अदालतों और निचली अदालतों में 3.9 करोड़ मामले लंबित हैं। हाईकोर्टों में 58.5 लाख और सुप्रीम कोर्ट में 69000 मामले लंबित हैं। इसकी एक बड़ी वजह जजों की कमी भी है। सुप्रीम कोर्ट में दायर एक याचिका पर सुनवाई के क्रम में उत्तर प्रदेश की अदालतों में लंबित पड़े मामलों की जो तस्वीर उभरी है, उसकी अनदेखी नहीं की जा सकती। इससे पता चलता है कि यूपी में किसी निचली अदालत द्वारा किसी आपराधिक मामले में दोषी करार दिया गया कोई व्यक्ति अगर हाईकोर्ट में अपील करता है, तो उसे इंसाफ के लिए औसतन 35 साल इंतजार करना पड़ता है। यानी अगर किसी पर गंभीर धाराओं के अपराध दर्ज हैं, जिनमें जमानत मिलना मुश्किल होता है तो बहुत संभव है उसे फैसला आने से पहले बरसों बरस जेल में ही बिताना पड़ जाए। यह मामला दरअसल सुप्रीम कोर्ट पास कई याचिकाओं के रूप में आया, जिनमें अदालत से गुहार लगाई गई थी कि वह दखल देकर बरसों से (कई मामलों में तो 14 बरस से भी ज्यादा) जेल में पड़े सुनवाई का इंतजार कर रहे कैदियों को जमानत देने की राह खोले। सुप्रीम कोर्ट के सामने रखे गए तथ्यों से साफ होता है कि हाईकोर्ट की इलाहाबाद और लखनऊ बेंचों के पास इस समय 1,83000 आपराधिक अपीलें लंबित हैं। पिछले पांच वर्षों में कोर्ट ने 16,279 आपराधिक अपीलें निपटाई हैं, लेकिन इसी अवधि में 41,151 नए अपीलीय मामले आ गए हैं।

आपराधिक अपीलीय मामले निपटाने की कोर्ट की रफ्तार 18 फीसदी बताई जाती है। इस मामले में भले बात सिर्फ उत्तर प्रदेश की अदालतों की हो रही हो, देश के अन्य राज्यों में भी कोई बेहतर हालात नहीं हैं। उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक देश भर की जिला अदालतों और निचली अदालतों में 3.9 करोड़ मामले लंबित हैं। हाईकोर्टों में 58.5 लाख और सुप्रीम कोर्ट में 69000 मामले लंबित हैं। इसकी एक बड़ी वजह जजों की कमी भी है। इलाहाबाद हाई कोर्ट की ही बात करें तो वहां जजों के कुल 67 पद खाली पड़े हुए हैं। ऐसा ही अन्य कोर्टों में भी है। इन पदों को जल्द से जल्द भरने का इंतजाम भी होना चाहिए, शीघ्र सुनवाई और जल्द फैसले सुनिश्चित करने से जुड़ी अन्य सिफारिशों पर अमल के प्रयास भी साथ-साथ चलने चाहिए, लेकिन इन सबसे पहले जेलों में अपनी सुनवाई का इंतजार कर रहे कैदियों को तत्काल राहत देने की व्यवस्था होनी चाहिए। यूपी सरकार की ओर से इस मामले में सुप्रीम कोर्ट में कहा गया है कि जघन्य अपराध और आदतन अपराध से जुड़े मामलों को छोड़कर आजीवन कैद के मामले में दस साल और अन्य मामलों में तय सजा की आधी अवधि में गुजार चुके कैदियों को जमानत दी जा सकती है। इस सुझाव पर गंभीरता से विचार किया जाना चाहिए। यह भी जरूरी है कि राहत देने का ऐसा कोई फॉर्म्यूला सिर्फ यूपी तक सीमित न रहे। चूंकि समस्या पूरे देश की है, इसलिए इलाज के दायरे में भी पूरे देश को शामिल किया जाना चाहिए।

कोटे में घट रही असल ओबीसी की जगह

नीरज कौशल

देश में आरक्षण और जातिवार जनगणना को लेकर बहस नए सिरे से तेज हो रही है। ऐसे में जो असल में पिछड़ी जातियां हैं, उन्हें चौकन्ना हो जाना चाहिए क्योंकि जो कथित बड़ी जातियां हैं, वे केंद्र और राज्य सरकारों की ध्ँण् लिस्ट में घुस आई हैं। वे उस आरक्षण का लाभ ले रही हैं, जो आर्थिक और सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों को मिलना चाहिए।ओबीसी की राज्यों और केंद्र सरकारों की लिस्ट में अपर कास्ट की घुसपैठ रातोरात नहीं हुई। मंडल कमिशन ने सरकारी नौकरियों में 27 फीसदी आरक्षण की सिफारिश की थी। वीपी सिंह सरकार ने जब वह सिफारिश लागू की, लगभग तभी से ध्ँण् लिस्ट में अपर कास्ट की घुसपैठ शुरू हो गई। उदाहरण के लिए, कर्नाटक में आरक्षण के लिए राज्य की जो ध्ँण् लिस्ट है, उसमें आर्थिक रूप से पिछड़ी कई जातियां हैं। इनमें गौड़ सारस्वत ब्राह्मण भी हैं। गौड़ सारस्वत ब्राह्मण दरअसल सारस्वत ब्राह्मणों का हिस्सा हैं। मेरी मां बताती थीं कि समाज में सारस्वत ब्राह्मणों का स्थान इतना ऊंचा था कि उन्हें पूजने लायक माना जाता था। तमिलनाडु और केरल में अन्य पिछड़ा वर्ग की लिस्ट देखें तो पता चलता है कि सौराष्ट्र ब्राह्मण जैसी ऊंची जातियां उनमें शामिल हैं। जाति व्यवस्था में अपने दर्जे के चलते ब्राह्मणों का जीवन दूसरों के मुकाबले आसान रहा। व्यवसाय के रूप में उनका काम था धर्म-कर्म की चीजें पढ़ना-पढ़ाना और पूजा-पाठ वगैरह करना-कराना। इसके बदले में उन्हें खाने-पीने की चीजें, कपड़े और दूसरे उपहार दिए जाते थे। रहने का इंतजाम भी या तो मंदिर में या उसके आसपास कर दिया जाता था। मंडल कमिशन के मुताबिक, ध्ँण् उन्हें माना जाता है, जो सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े हों। ऐसे में यह एक पहेली ही है कि ब्राह्मण कब, कैसे और क्यों सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े हो गए। राज्यों की ध्ँण् लिस्ट में राजपूत भी हैं। उत्तराखंड में लोधी राजपूत और पंजाब में कश्यप राजपूत। राजपूत का मतलब है राजा का बेटा। एक जाति के रूप में देखें तो राजपूतों ने कई सदियों तक भारत के तमाम इलाकों पर राज किया। जाति क्रम में भी योद्धा और शासक के रूप में उनका दर्जा हमेशा सबसे ऊंचा रहा। ऐसे में राज करने वाली जाति को 'पिछड़ा' कैसे कहा जा सकता है महाराष्ट्र में खुद को छत्रपति शिवाजी का वंशज बताने वाला मराठा समुदाय ध्ँण् लिस्ट में आना चाहता है। राज्यों की ध्ँण् लिस्ट में कई ऐसी जातियां भी हैं, जिनके पास अच्छी-खासी जमीन है। राजस्थान में पटेल समुदाय ऐसा ही है। जाट समुदाय भी इसी तरह का है। सबसे बड़ी विडंबना है कथित नीची जातियों के लिए। इनमें न केवल मराठा, बल्कि दलित भी शामिल हैं। खुद को लड़ाकों में बदलकर उन्होंने अपने ऐतिहासिक पिछड़ेपन से पीछा छुड़ाया और शासक भी बने। मसलन, सिंधिया और गायकवाड़। फिर किसने हिमाकत की इन जातियों को ध्ँण् बताने की

ब्राह्मणों, क्षत्रियों और अच्छी-खासी जमीन रखने वाली जातियों के कारण ही कई जातियां पिछड़ गईं। इन ऊंची जातियों ने जो सामाजिक व्यवस्था बनाई और जो रीति-रिवाज थोपे, उनके चलते असल ध्ँण् के हाथों से मौके छिन गए। इन असल ध्ँण् का जीवन छोटे-मोटे धंधों में फंसकर रह गया। ऊंची जातियों ने सामाजिक, आर्थिक और पेशागत सीमाएं तय कीं और इन असल ध्ँण् को उन्हें पार नहीं करने दिया गया।

एक समय किसी नीची मानी जाने वाली जाति में जन्म लेना अपने आप में अभिशाप था। लेकिन आधुनिक भारत में कई जातियां मांग कर रही हैं कि उन्हें 'पिछड़ा' मान लिया जाए। वे दरअसल आरक्षण का फायदा लेना चाहती हैं। सामाजिक दायरे में वे ऊंची जाति के दर्जे का फायदा ले रही हैं और आर्थिक दायरे में आरक्षण के लाभ उठाना चाहती हैं। इस साल 10 अगस्त को संसद के दोनों सदनों ने 127वें संशोधन विधेयक को एकमत से पास किया। इस बिल ने राज्यों का एक अधिकार बहाल किया। अब वे तय कर सकते हैं कि ध्ँण् की उनकी लिस्ट में कौन जाति रहेगी, कौन नहीं। इससे एक नया बवाल शुरू होगा। ऊंची जातियां जोर लगाएंगी कि उन्हें ध्ँण् लिस्ट में रख दिया जाए। नेता वोटों के लिए उनकी बात मान लेंगे। ध्ँण् की लिस्ट राज्य के स्तर पर तैयार होनी ही चाहिए क्योंकि हो सकता है कि कोई जाति किसी राज्य में पिछड़ी हो और दूसरे राज्य में न हो। लेकिन लिस्ट बनाने के लिए राज्य स्तर पर स्वतंत्र संस्थाओं की जरूरत है, जो राजनेताओं के प्रभाव में न हों। साथ ही, क्रीमी लेयर वालों को भी लिस्ट में नहीं रखना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट की रूलिंग भी यही है। वैसे भी जातियों की गणना का मसला काफी जटिल हो गया है। 1901 की जनगणना में बताया गया कि भारत में एक हजार 646 जातियां थीं। 1931 की जनगणना होने तक यह संख्या ढाई गुना बढ़ गई। बताया गया कि देश में 4 हजार 147 जातियां हैं। 1931 की जनगणना के बाद से देश में जातियों की संख्या एक हजार गुना बढ़ चुकी है। देश में सामाजिक, आर्थिक और जातिगत जनगणना पहली बार 2011 में कराई गई। उस जनगणना में जातियों, उप-जातियों, सरनेम, गोत्र, कुल आदि के रूप में 46 लाख कैटिगरी सामने आईं। उस जनगणना में जातियों के बारे में जो ब्योरे दर्ज किए गए, उनमें आठ करोड़ से ज्यादा गलतियां हैं। राज्य सरकारों ने करीब पौने सात करोड़ गलतियां ठीक कर दी हैं, लेकिन अब भी डेढ़ करोड़ जस की तस हैं। हमें लेकिन यह नहीं पता कि सरकारी अधिकारियों ने कुछ ब्योरों को किस आधार पर गलत माना और किस आधार पर उन्हें दुरुस्त किया। इस साल 10 अगस्त को आखिरकार सरकार ने 2011 की जनगणना को अशुद्ध करार दिया। उसने वादा किया है कि हर दस साल पर होने वाली जनगणना जब पूरी हो जाएगी, तो उसके बाद एक और जातिवार जनगणना कराई जाएगी। भारत सरकार को लेकिन यह पूछना चाहिए कि जातिवार जनगणना की जरूरत क्या है और क्या उसमें पक्षपात नहीं होगा

कॉमन रूमः तमाशा बना दिया गया है नीरज चोपड़ा का

रूपेश रंजन सिंह

सोने का महत्व और इसकी कद्र भारत ही समझता और करता है। हम चीनियों की तरह नहीं हैं, जिन्होंने 38 स्वर्ण पदक विजेता सहित कुल 88 पदक विजेताओं को स्वदेश लौटते ही क्वॉरंटीन कर दिया। हम तो एयरपोर्ट पर उतरते ही ऐथलीट के गले पड़ जाते हैं। उसे एक पल के लिए भी अकेला नहीं छोड़ते। उसका इतना सम्मान करते हैं कि दुनिया हैरान हो जाती है। अन्य देशों के ऐथलीटों को हमारे ऐथलीटों से रश्क होने लगता है।तोक्यो ओलिंपिक में भारत को ऐथलेटिक्स में पहला स्वर्ण पदक दिलाने वाले जैवलिन थ्रोअर नीरज चोपड़ा इसका जीता जागता उदाहरण हैं। नीरज ने सात तारीख को गोल्ड जीता और उसके बाद से मजाल है कि उन्हें अपने बारे में सोचने का भी वक्त दिया जाए। अगर कोई शक-ओ-शुबह है तो नीरज के पिछले कुछ दिनों का यह कार्यक्रम देख लीजिए।नीरज ने 7 अगस्त को गोल्ड जीता। इसके बाद से वह मीडिया से घिरे रहे। तोक्यो में ही एक के बाद एक इंटरव्यू हुए। 8 तारीख को समापन समारोह में शामिल हुए। 9 को करीब छह घंटे की हवाई यात्रा करके भारत लौटे। शाम को स्वदेश लौटने के कुछ घंटों बाद ही खेल मंत्रालय के एक सम्मान समारोह में शामिल हुए। एयरपोर्ट से होटल तक के रास्ते में भी वह मीडिया व प्रशंसकों से घिरे रहे। 10 तारीख को ऐथलेटिक्स फेडरेशन ऑफ इंडिया के सम्मान समारोह में पहुंचे। इसके बाद उन्हें तेज बुखार हो गया। 12 और 14 तारीख को इस कारण वह पंजाब सरकार और हरियाणा सरकार के सम्मान समारोह में शामिल नहीं हो सके। लेकिन 14 की शाम राष्ट्रपति भवन में चाय के कार्यक्रम में वह मौजूद रहे। 15 अगस्त की सुबह से लाल किले पर मौजूद रहे। उसी शाम भारतीय ओलिंपिक्स संघ के कार्यक्रम में पहुंचे। 16 की सुबह प्रधानमंत्री से नाश्ते पर मुलाकात की। 17 को उनके गांव में जलसा था, उसके लिए वह पानीपत पहुंचे। लेकिन तबीयत नासाज थी, उन्हें कार्यक्रम बीच में ही छोड़कर निकलना पड़ा। खबर आई कि उन्हें कुछ देर के लिए पानीपत में अस्पताल में भर्ती भी होना पड़ा। लेकिन 18 तारीख को फिर उन्हें हरियाणा के मुख्यमंत्री के कार्यक्रम में शामिल होना पड़ा। उसी रात वह लखनऊ पहुंचे, अगले दिन यूपी सरकार के सम्मान समारोह में शामिल हुए।भारत पहुंचने के बाद नीरज का यह व्यस्त कार्यक्रम पढ़ते-पढ़ते शायद आप भी थक जाएं, लेकिन नीरज को थकने नहीं दिया गया। नीरज के बगल से गुजरा हर शख्स सोशल मीडिया के हर प्लैटफॉर्म पर उसके साथ की तस्वीर साझा कर अपनी पहुंच और नीरज से अपनी नजदीकी का सबूत पेश कर रहा है। सम्मान समारोह के जरिए हर कोई नीरज की उपलब्धि में अपना भी योगदान साबित कर रहा है। फिलहाल सभी खेल प्रेमी बन गए हैं।हालांकि इस बीच कुछ फेडरेशन वाले खासकर शूटिंग फेडरेशन वाले नीरज के गोल्ड से अतिरिक्त खुश होंगे क्योंकि कुछ देर के लिए ही सही, उनकी नाकामियों से सभी का ध्यान हट गया है। तोक्यो ओलिंपिक्स के शुरुआती दिनों में निशानेबाजों की असफलता पर हाहाकार करने वाले आज नीरज के साथ एक फोटो खिंचवाने की होड़ में शामिल हो चुके हैं। सभी नीरज से मिलना चाहते हैं, सभी उनका सम्मान करना चाहते हैं, सभी उनसे बातें करना चाहते हैं, लेकिन नीरज क्या चाहते हैं, यह कोई नहीं पूछ रहा, क्योंकि कार्यक्रम तो तय हो चुका है। फूल-मालाएं खरीदी जा चुकी हैं। अतिथि गणों को न्योता भेजा जा चुका है ऐसे में सम्मान तो नीरज को लेना ही होगा।

यहां सम्मान दिया नहीं, लादा जा रहा है। ऐतिहासिक स्वर्ण पदक जीतने की खुशी समझ आती है, लेकिन सम्मानित करने की होड़ समझ से परे है। नीरज ने देश का मान बढ़ाया है, हमें उनका आदर करना ही चाहिए, लेकिन हमें उनके स्वास्थ्य का भी ख्याल रखना होगा। फिलहाल, नीरज किसी अन्य प्रतियोगिता में भाग लेने विदेश भी नहीं जा रहे, ऐसे में उन्हें कुछ दिन आराम करने और अपने परिवार संग समय बिताने का मौका मिलना चाहिए। इस तरह के जान-लेवा सम्मान समारोह को देख कहीं ऐथलीट भी ओलिंपिक्स में गोल्ड मेडल जीतने से कतराने ना लग जाएं।

अफगान मसला : संवाद की खिड़की का खुलना सुखद

राकेश अचल

भारत का रवैया सम्भवतः पारम्परिक विदेश नीति के अनुरूप होगा। भारत सरकार के पास एक मौका है जब वह विदेश नीति को लेकर अतीत में हुई अपनी गलतियों को सुधार ले। ऐसा सभी के साथ विचार-विनिमय से ही मुमकिन होता है। याद रखना होगा कि इस समय हम अफगान मामले में अपनी ढपली से जो भी राग निकालेंगे उससे ही पूरे क्षेत्र में हमारे वैदेशिक रिश्तों का निर्धारण होगा। अपनी धुन में चलने वाली नरेन्द्र मोदी सरकार ने देर से ही सही लेकिन अफगान मसले पर संवाद की खिड़की खोलकर समझदारी का काम किया है। खबर है कि केन्द्र ने अफगानिस्तान मामले पर 26 अगस्त को एक सर्वदलीय बैठक आहूत की है, जिसमें सभी को पड़ोसी मुल्क के ताजा हालात से वाकिफ कराया जाएगा। सरकार को यह फैसला करने में कोई दस दिन लग गए। अफगान मसले पर देश की चुप्पी को लेकर सब दूर बैचेनी थी, बेचैनी है। अभी तक किसी को पता नहीं है कि अफगानिस्तान में तालिबान के आने के बाद भारत ने क्या सोचा है और क्या किया है सरकार अफगानिस्तान में फंसे भारतीयों को बाहर निकालने में व्यस्त थी। मुमकिन है कि इसी वजह से सरकार ने मौन धारण कर लिया हो। अब लगता है कि सरकार भारतीयों को स्वदेश लाने के मिशन में कामयाब हो गई है, इसलिए इससे फारिग होते ही सर्वदलीय बैठक करने जा रही है। विपक्ष को लम्बे समय से शिकायत है कि सरकार तमाम मुद्दों पर न बात करती है और न बहस। विपक्ष की शिकायत सही है। कायदे से तो यह शिकायत मीडिया को भी है किन्तु मीडिया आजकल गिले-शिकवे करना शायद भूल गया है, इसलिए उसे सरकार के बोलने और न बोलने से कोई खास फर्क नहीं पड़ता। गोदी मीडिया का काम कट-पेस्ट और उधार की सामग्री से चल जाता है। वैसे भी मीडिया की विश्वसनीयता अब पहले जैसी रही भी नहीं।

अफगान मसले पर अमेरिका के राष्ट्रपति दस दिन में मीडिया के सामने दो बार आए, चीन के विदेश मंत्री भी बोले लेकिन भारत ने मौन रहना ही श्रेयस्कर समझा। अब सरकार की समझ को चुनौती तो नहीं दी जा सकती। हां, सवाल किये जा सकते हैं, जो किये गए। भले ही किसी भी सवाल का कोई जवाब नहीं मिला। दुर्भाग्य यह है कि हमारी सरकार सवालों से भागती है। सवाल चाहे संसद में किये जाएं या सड़क पर खड़े होकर- सरकार को नहीं पोसाते। अफगान मामले पर भी ढेरों सवाल किये गए लेकिन सरकार नहीं बोली क्योंकि उसे नहीं बोलना था। अच्छी और चौंकाने वाली खबर यह है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने विदेश मंत्रालय से कहा है कि वह अफगानिस्तान में हुए घटनाक्रम की जानकारी संसद में राजनीतिक दलों के नेताओं को दे। इसी तारतम्य में केन्द्र सरकार ने 26 अगस्त को सर्वदलीय बैठक बुलाई है। इस मीटिंग में अफगानिस्तान में फंसे भारतीयों को निकालने के लिए सरकार की ओर से किए गए प्रयासों की जानकारी विपक्षी दलों को दी जाएगी। इसके अलावा अफगानिस्तान में तालिबान राज के बाद भारत सरकार क्या कूटनीतिक कदम उठा रही है, इस पर भी चर्चा होने की संभावना है। सभी को शायद याद हो कि कांग्रस के राहुल गांधी ने बहुत पहले ही संसद में अफगानिस्तान के मुद्दे पर बहस की मांग की थी लेकिन इस मांग को कोई तवज्जो नहीं दी गई क्योंकि मांग कांग्रेस और खास तौर पर राहुल गांधी की ओर से की गई थी। सरकार यदि संसद के चलते अफगानिस्तान पर बहस कर लेती तो मुमकिन है कि उसके ऊपर राजनीतिक हमले न हुए होते लेकिन बहस इस सरकार का चरित्र नहीं है। जब सरकार आठ महीने से अधिक वक्त से आंदोलनरत किसानों से बहस नहीं कर रही है, तो फिर अफगानिस्तान का मामला तो एकदम ताजा है। केन्द्र सरकार की इस बात के लिए सराहना की जा सकती है कि उसने बड़े ही सुरक्षित तरीके से अफगानिस्तान में रहने वाले अधिकांश भारतीयों को बाहर निकाल लिया है। सचमुच यह एक कठिन और तनाव का काम था। भारतीयों की सकुशल वापसी के बाद अब सरकार देश को अपनी भावी योजनाओं और रणनीति के बारे में बता सकती है। बीते कुछ सप्ताह में तालिबान ने अफगानिस्तान पर कब्जा जमा लिया है। राजधानी काबुल समेत देश के कई प्रांतों पर तालिबान का 15 अगस्त से नियंत्रण है। उसके बाद राष्ट्रपति अशरफ गनी ने देश छोड़ दिया था। इसके बाद बड़ी संख्या में भारतीय वहां फंस गए थे, जिन्हें निकालने के लिए एयरफोर्स को सक्रिय किया गया था। अब तक भारत ने 730 लोगों को अफगानिस्तान से बाहर निकाला है। इनमें राजनयिकों के अलावा बड़ी संख्या में हिंदू और सिख समुदाय के लोग भी शामिल हैं। इस अभियान में अमेरिका ने भी भारत की सहायता की।तालिबान की भाव-भंगिमाएं अभी तक बदली नहीं हैं। तालिबान अभी भी धमकी भरी भाषा में बात कर रहा है। तालिबान के प्रवक्ता सुहैल शाहीन ने एक बयान जारी किया और चेतावनीपूर्ण लहजे में कहा कि नाटो फोर्स 31 अगस्त तक काबुल एयरपोर्ट से नियंत्रण छोड़े और अपने देश लौट जाए। अफगानिस्तान से दुनिया भर के देश अपने नागरिकों को निकालने में लगे हुए हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडेन ने भी कहा था कि अगस्त के अंत तक काबुल से लोगों को निकालने का काम पूरा कर लिया जाएगा। यदि विदेशी अफगानिस्तान में रह गए तो आगे उन्हें निकालना कठिन हो जाएगा। अफगानिस्तान के मुद्दे पर केन्द्र सरकार को सबकी सलाह से फैसला लेना चाहिए ताकि बाद में उसे अपनी आलोचना न सुननी पड़े। अफगानिस्तान की नई सरकार के प्रति भारत सरकार का रुख पूरे क्षेत्र की राजनीति और अर्थव्यवस्था को प्रभावित करेगा। सारी दुनिया की नजर भारत पर है। भारत का रवैया सम्भवतः पारम्परिक विदेश नीति के अनुरूप होगा। भारत सरकार के पास एक मौका है जब वह विदेश नीति को लेकर अतीत में हुई अपनी गलतियों को सुधार ले। ऐसा सभी के साथ विचार-विनिमय से ही मुमकिन होता है। याद रखना होगा कि इस समय हम अफगान मामले में अपनी ढपली से जो भी राग निकालेंगे उससे ही पूरे क्षेत्र में हमारे वैदेशिक रिश्तों का निर्धारण होगा। अफगान के बहाने चीन, रूस और पाकिस्तान के साथ ही हमें अमेरिका से अपने रिश्तों की भी समीक्षा करना होगी और यह काम बहुत आसान नहीं है। अफगानिस्तान में हुई उथल-पुथल का जितना खमियाजा अमेरिका को भुगतना पड़ेगा वह तो जगजाहिर है लेकिन हम पर इसका जो असर पड़ने वाला है उसका आकलन किया जाना अभी शेष है। ऐसी उम्मीद की जा सकती है कि बातचीत की खिड़की के खुलने से इस आकलन में मदद मिलेगी।

तालिबान से डरते, उसके नाम से डराते और ओट में छिपते लोग

डॉ. दीपक पाचपोर

भारत सार्क देशों के समूह में सबसे बड़ा व महत्वपूर्ण है। अतः उससे यह सहज अपेक्षा की जाती है कि वह तालिबान जैसे संगठनों का खुला विरोध करे क्योंकि हमारी सीमाओं की सुरक्षा के लिये भी यह ज़रूरी है। भारत तो आतंकवाद के विरूद्ध अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी आवाज उठाता रहा है। तालिबान संकट का संबंध भारत की सुरक्षा से है। जब हमारे देश के दोनों प्रमुख दुश्मन- चीन एवं पाकिस्तान तथा मित्र रहा रूस तालिबान के साथ खड़े दिख रहे हैं।

पहली श्रेणी में तो है हमारी केन्द्र सरकार जिसने पड़ोसी मुल्क पर आये अभूतपूर्व संकट पर अब तक मौन साध रखा है। अभी तक भारत का कोई भी अधिकारिक बयान नहीं आया है जिससे यह पता चले कि आखिर हमारे देश का रुख इस मुद्दे पर क्या है। यहां तक कि स्वतंत्रता दिवस समारोह पर लाल किले से भाषण करते हुए मोदी ने पाकिस्तान विभाजन विभीषिका, पड़ोसी मुल्कों में आतंकवाद जैसे विषयों का उल्लेख तो किया परन्तु अफगानिस्तान संकट जैसे मामलों पर वे खामोश रहे। 14-15 अगस्त को ही अफगानिस्तान में लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित अफरफ गनी सरकार को आतंकी संगठन तालिबान ने बेदखल कर सत्ता हथिया ली थी। इस बात को आज करीब दो सप्ताह हो चुके हैं तथा उस देश से आशंकाओं के अनुरूप लोगों पर जुल्म की खबरें और तस्वीरें सामने आने लगीं हैं। वहां मानवाधिकार हनन का भी भारी खतरा है। फिर भी ज्यादातर देशों ने दुर्भाग्यपूर्ण तरीके से मौन साध रखा है जिनमें भारत भी शामिल है, जो कहीं अधिक दुखदायी है। भारत सरकार की यह चुप्पी भय के कारण ही मानी जायेगी जो उसकी प्रतिष्ठा और अपेक्षित भूमिका के अनुकूल नहीं है। मोदी को सत्ता में लाने के पीछे उनकी एक शक्तिशाली नेता की छवि रही है। एक सुनियोजित अभियान के अंतर्गत यह बात बारम्बार फैलाई गई थी कि उनके शासन सम्भालने के बाद भारत की ओर कोई आंख उठाकर भी नहीं देख सकेगा। मोदी के शब्द जाल और उनकी पार्टी, कार्यकर्ताओं, समर्थकों और आईटी सेल के प्रचार ने यह भ्रम काफी समय तक बनाये रखा। अपने शपथ ग्रहण समारोह में पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान सहित सार्क सदस्य देशों को आमंत्रित करने और पहले कार्यकाल के बेहद प्रारंभिक दिनों में अफगानिस्तान से उड़कर बिन बुलाये पाकिस्तान के पूर्व पीएम नवाज़ शरीफ़ के घरेलू समारोह में चले जाने को मोदी की सदाशयता के तौर पर लिया गया था। मोदी की इस छवि को पहला झटका तब मिला था जब चीन ने

भारत के भीतर घुसपैठ की और वे इससे नकारते रहे।

वे चीन की ऐसी हरकतों पर अब भी मौन ही रहते हैं। अब यह दूसरा अवसर है जब भारत की जनता और दुनिया (कम से कम दक्षिण एशियाई एवं सार्क देश) मोदी की ओर देख रही है कि वे इस मुद्दे पर क्या कहते हैं; पर वे और उनकी सरकार मौन है। विपक्षी दलों के साथ उन्होंने अब कहीं जाकर 26 अगस्त को बैठक बुलाई है, लेकिन उनके पास ऐसे अनेक कारण हैं जिनके चलते उन्हें इस संबंध में पहले ही आगे बढ़कर बयान देना चाहिये था। मुख्य कारण तो यही है कि अफगानिस्तान के साथ हमारे सदियों पुराने सांस्कृतिक और व्यापारिक संबंध हैं। वहां इस्लाम धर्म के उद्भव के पहले बौद्ध धर्म का बोलबाला था जो दोनों देशों को एक सूत्र में पिरोता है। वहां के नये धार्मिक चरित्र के बाद भी नागरिक स्तर पर दोनों देशों के संबंध बने रहे हैं। खासकर, वहां के हिन्दू एवं सिख लोगों की उपस्थिति के चलते। फिर, अफगानिस्तान की वर्तमान हालत के लिये मुख्य रूप से महाशक्तियां जिम्मेदार हैं- अमेरिका एवं रूस। भारत ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही गुट निरपेक्षता की राह पकड़ी थी। एक तरह से वह उन 125 से ज्यादा देशों का नेतृत्व करता रहा है जो किसी खेमे के सदस्य नहीं हैं। देश के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने यूगोस्लाविया के राष्ट्रपति जोसिप ब्रीजो (मार्शल) टीटो और मिस्र के राष्ट्रपति जमाल अब्देल नासेर के साथ मिलकर गुट निरपेक्ष आंदोलन (एनएएम- नाम) को खड़ा किया था जो दूसरे महायुद्ध के बाद अमेरिका एवं सोवियत रूस के बीच वर्षों तक जारी रहे शीत युद्ध के बीच भी बढ़ता रहा। विश्व नेतृत्व की हसरत के चलते हाल के वर्षों में नरेन्द्र मोदी ने नाम का कबाड़ा कर दिया है। अब हमारी वैदेशिक नीति का उद्देश्य अंतरराष्ट्रीय सौहार्द्र, परस्पर सामंजस्य एवं विश्व शांति नहीं वरन अपने कुछ मित्रों को संपन्न करने और बड़े देशों को खुश करने के लिये हथियार खरीदने और पूंजी निवेश आमंत्रित करने तक का रह गया है। आतंकवाद एवं पड़ोसी देशों का भय दिखाकर आम जनता की मूलभूत सुविधाओं में भारी कटौती करते हुए मोदी सरकार पिछले कुछ वर्षों से बड़े पैमाने पर असलहा खरीद रही है। पूंजीवाद को प्रश्रय और बढ़ावा देने के कारण हम कुछ बड़ी ताकतों के पिछलग्गू बन गये हैं। अगर हम नाम के अब भी अगुवा होते तो ऐसी स्थिति में न केवल ऊंची आवाज में अपनी बात कह सकते थे बल्कि अपनी अंतरराष्ट्रीय साख के चलते शायद हस्तक्षेप करने की भी हालत में होते। जहां भी मानवीयता पीड़ित होती रही है, बड़े देशों से डरे बगैर भारत ने आवाज बुलन्द की है और यथाशक्ति सहायता भी पहुंचाई है।

इतना ही नहीं, भारत सार्क देशों के समूह में सबसे बड़ा व महत्वपूर्ण है। अतः उससे यह सहज अपेक्षा की जाती है कि वह तालिबान जैसे संगठनों का खुला विरोध करे क्योंकि हमारी सीमाओं की सुरक्षा के लिये भी यह ज़रूरी है। भारत तो आतंकवाद के विरूद्ध अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी आवाज उठाता रहा है। तालिबान संकट का संबंध भारत की सुरक्षा से है। जब हमारे देश के दोनों प्रमुख दुश्मन- चीन एवं पाकिस्तान तथा मित्र रहा रूस तालिबान के साथ खड़े दिख रहे हैं, तो भारत को आवाज उठाना लाजिमी है। अमेरिका एवं यूरोपीय देशों ने अब तक इस घटना को लेकर अपना रवैया साफ नहीं किया है क्योंकि इस समस्या के वे ही दोषी हैं। नई अफगानी सरकार को मान्यता देना लोकतांत्रिक रूप से विकसित इन देशों के लिए मुश्किल है क्योंकि उन्हें अपनी जनता के विरोध का सामना करना पड़ सकता है। इन स्थितियों को देखते हुए लगता है कि भारत कुछ कहने या करने के लिए बड़े देशों का मुंह ताक रहा है जो एक शक्तिशाली तथा लोकतंत्र में आस्था रखने वाले हमारे देश के लिए सर्वथा अनुचित है। फिर, वह इस समय (एक माह के लिये) संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का अध्यक्ष भी है इसलिये उसकी नैतिक जिम्मेदारी भी बढ़ी हुई है। वहां मानवाधिकारों की रक्षा और शांति की अपील तो वह कर ही सकता है। सरकार की चुप्पी के बीच सत्ताधारी पार्टी समर्थित एक वर्ग ऐसा है जो तालिबान के नाम पर भयादोहन में बिन सौंपी गई ड्यूटी बजाने में व्यस्त हो गया है। सोशल मीडिया पर वह लोगों को डरा रहा है कि अगर मोदी न रहे तो तालिबान भारत भी आ धमकेगा। वह यह साबित करने पर तुला हुआ है कि अगर भाजपा की सरकार न रहती तो अब तक वह हमारे देश पर कब्जा कर चुका होता। यह आपदा में अवसर तलाशने जैसा ही है। संभवतः इस मुद्दे को 2022 में उत्तर प्रदेश के विधानसभा और 2024 में होने वाले लोकसभा चुनाव हेतु अभी से पकाया जाने लगा है। तीसरी श्रेणी है इस मुद्दे की आड़ में छिपने वालों की। पार्टी व उसके समर्थकों को अपनी असफलताओं को छिपाने के लिये एक नई ओट मिल गई है। अफगानिस्तान संकट ने तालिबान से डरने, उसके नाम पर डराने और उसकी ओट में छिपने वालों को उघाड़कर रख दिया है।

बैटिंग में लगातार संघर्ष कर रहे विराट कोहली को सुनील गावस्कर ने दी महान बल्लेबाज से मदद लेने की सलाह

नई दिल्ली (एजेंसी)। पूर्व भारतीय कप्तान सुनील गावस्कर ने हाल के समय में इंटरनेशनल क्रिकेट में लगातार असफल हो रहे मौजूदा कप्तान विराट कोहली को मास्टर ब्लास्टर सचिन तेंदुलकर से मदद लेने की सलाह दी है। कोहली बुधवार से इंग्लैंड के खिलाफ शुरू हुए तीसरे टेस्ट की पहली पारी में जेम्स एंडरसन की गेंद पर आउट हो गए और वह केवल सात रन ही बना सके। गावस्कर ने विराट कोहली का विकेट देखने के बाद कहा कि भारतीय कप्तान को तुरंत सचिन को फोन कर उनसे मदद मांगनी चाहिए। गावस्कर ने लीड्स टेस्ट में कमेंट्री के दौरान कहा, ' विराट कोहली को तुरंत सचिन को कॉल कर उनसे पूछना होगा कि मुझे क्या करना चाहिए वही करो जो सचिन ने सिडनी टेस्ट में किया था। खुद को कहो कि मैं कवर ड्राइव नहीं लगाऊंगा।' कोहली इस सीरीज में दूसरी बार जेम्स एंडरसन का शिकार बने। भारतीय कप्तान ने एंडरसन की गेंद पर स्ट्रेट ड्राइव लगाने की कोशिश की लेकिन गेंद बाहर की ओर निकल गई और विकेटकीपर जोस बटलर ने उनका कैच लपक लिया। कोहली तीन टेस्ट मैचों की चार पारियों में अब तक केवल 69 रन ही बना पाए हैं।

पिच को लेकर गावस्कर ने इंग्लैंड को सुनाई खरी- खोटी कहा, हम आपकी तरह रोते नहीं हैं

नई दिल्ली (एजेंसी)। इसी साल जब इंग्लैंड की टीम भारत आई थी, तब पहला टेस्ट हारने के बाद भारत ने टर्निंग विकेट पर इंग्लैंड की टीम को सस्ते में निपटाकर सीरीज अपने नाम की थी। उस समय भी पिच को लेकर काफी विवाद खड़ा हुआ था। आज जब लीड्स में भारतीय टीम ने इंग्लैंड के गेंदबाजों के आगे सरेंडर कर दिया तब एक बार फिर पिच को लेकर चर्चा तेज हो गई है। लेकिन भारत के महान बल्लेबाज सुनील गावस्कर ने पिच को लेकर इंग्लैंड पर तीखा हमला किया है। गावस्कर ने कहा है कि इंग्लैंड की टीम जब भारत आती है तो टर्निंग विकेट के लिए शिकायत करती है और खुद भारत के लिए हरी विकेट बनाती है। सोनी स्पोर्ट्स नेटवर्क पर एक्स्ट्रा इनिंग्स के दौरान कहा, 'भारतीय खिलाड़ियों ने हरी विकेट को लेकर कभी शिकायत नहीं की है, चाहे वे इंग्लैंड में खेल रहे हों या ऑस्ट्रेलिया में। लेकिन इसके ठीक विपरीत इंग्लैंड की टीम स्पिन को मददगार विकेट मिलने पर हमेशा विलाप करते हैं।' उन्होंने आगे कहा, 'नॉटिंघम में हरी विकेट थी, यही कहानी लॉर्ड्स में भी थी। यहां हेडिंग्ले में भी हम थोड़ी सी घास देख सकते हैं। लेकिन आपने कभी देखा कि भारतीय खिलाड़ियों ने इसकी शिकायत की हो' इंग्लैंड को लताड़ते हुए गावस्कर ने कहा, 'ये भारतीय टीम किसी भी विकेट पर खेलने से नहीं डरती। ये इस भारतीय टीम की तरफ से एक बड़ा ऐलान है। और अगर इंग्लैंड को भारत में सीरीज जीतना है तो आपको विश्वस्तरीय स्पिन गेंदबाज बनाने होंगे।' उन्होंने आगे कहा, 'ऐसा नहीं है कि वे भारत में कभी जीते नहीं लेकिन उन सीरीज के समय उनके पास विश्वस्तरीय स्पिनर थे। एक अच्छा बल्लेबाज या गेंदबाज हर विकेट पर अच्छा करता है। यदि मैच की बात करें तो भारतीय टीम ने इंग्लैंड के तेज गेंदबाजों के सामने सरेंडर कर दिया।

एंडरसन ने टेस्ट क्रिकेट में सातवीं बार विराट कोहली को आउट किया है। एंडरसन अब टेस्ट क्रिकेट में विराट कोहली को सबसे ज्यादा बार आउट करने के मामले में नाथन लायन की बराबरी पर पहुंच गए हैं। गावस्कर ने कहा कि विराट कोहली का ऑफ स्टंप की बाहर से छेड़खानी करना बड़ी चिंता की बात है। उन्होंने कहा, 'ये मेरे लिए चिंता की बात है, क्योंकि वो पांचवें, छठे और सातवें स्टंप की गेंदों पर आउट हो रहे हैं। 2014 में भी वो ऑफ स्टंप पर आउट हो रहे थे।

100 रन भी नहीं बना पाई टीम इंडिया, दर्ज हुए शर्मनाक रिकॉर्ड्स

नई दिल्ली (एजेंसी)। इंग्लैंड में पहले दो टेस्ट मैचों में अपना दबदबा बनाने वाली टीम इंडिया लीड्स के मैदान पर ताश के पत्तों की तरह बिखर गई। एंडरसन की अगुआई में इंग्लैंड के गेंदबाजों ने तबाही मचा दी। भारतीय टीम पहली पारी में मात्र 78 रनों पर ढेर हो गई। इस खराब बल्लेबाजी प्रदर्शन के बाद भारतीय टीम के नाम कई शर्मनाक रिकॉर्ड दर्ज हो गए हैं। सफेद जर्सी में भारतीय टीम का यह नौवां सबसे न्यूनतम स्कोर है। भारत ने टेस्ट में ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ एडिलेड में अपने टेस्ट इतिहास में सबसे कम रनों पर सिमट गई थी। तब भारत ने 36 रन बनाए थे। ये 78 रन, इंग्लैंड में भारतीय टीम का तीसरा सबसे कम स्कोर है। इससे पहले 1974 में भारतीय टीम लॉर्ड्स के मैदान पर 42 रनों पर ऑलआउट हो गई थी। ये इंग्लैंड में भारत का सबसे खराब प्रदर्शन है। इसके अलावा टीम इंडिया ने 1952 में 58 रन ही बनाए थे। टॉस जीतकर पहले बल्लेबाजी करते हुए ये टीम इंडिया का तीसरा सबसे छोटा स्कोर है। इससे पहले

भारत ने साउथ अफ्रीका के खिलाफ 2008 में अहमदाबाद के मैदान पर 76 रन बनाए थे। वहीं इस लिस्ट में नंबर एक पर 1987 में वेस्टइंडीज के खिलाफ खेला गया दिल्ली टेस्ट है। तब भारतीय टीम 75 रनों पर ही ढेर हो गई थी। लीड्स के मैदान पर भारतीय टीम 2002 के बाद पहली बार खेल रही थी। टीम जब यहां आखिरी बार खेली थी तब भारत ने रनों का अम्बार लगा दिया था। भारत की तरफ से सचिन तेंदुलकर, राहुल द्रविड़ और सौरव गांगुली ने सैकड़ा जड़ा था। भारतीय टीम पिछले नौ महीने में 2 बार 100 रन के भीतर ढेर हो गई है।

पाकिस्तान के हेड कोच मिस्बाह उल हक हुए कोरोना पॉजिटिव, 10 दिन जमैका में रहेंगे क्वारंटाइन

नई दिल्ली (एजेंसी)। पाकिस्तान के हेड कोच मिस्बाह उल हक कोरोना पॉजिटिव पाए गए हैं। वो बुधवार को अब पाकिस्तान की क्रिकेट टीम के साथ लाहौर के लिए रवाना नहीं होंगे। मिस्बाह उल हक में अभी कोरोना के लक्षण नहीं हैं और वो दस दिन क्वारंटाइन में जमैका में रहेंगे। पीसीबी ने एक आधिकारिक बयान में कहा,' मिस्बाह पाकिस्तानी टीम में एकमात्र सदस्य हैं जो रवानगी पूर्व पीसीआर जांच में विफल रहे। सभी अन्य सदस्य कार्यक्रम के अनुसार बुधवार जमैका छोड़ देंगे। पीसीबी लगातारा क्रिकेट वेस्टइंडीज के संपर्क में हैं, जिन्होंने पुष्टि की है कि मिस्बाह को 10 दिन के लिए अलग होटल में क्वारंटाइन किया जाएगा। जहां उनके स्वास्थ की देखभाल के लिए एक चिकित्सा विशेषज्ञ होगा।' पाक के बाएं हाथ के तेज गेंदबाज शाहीन शाह अफरीदी की करियर की सर्वश्रेष्ठ गेंदबाजी की बदौलत पाकिस्तान ने वेस्टइंडीज को दूसरे टेस्ट में हराया। इसी के साथ पाकिस्तान ने दो मैचों की टेस्ट सीरीज 1-1 से बराबरी पर खत्म की। किंग्स्टन के सबीना पार्क में मंगलवार को मेजबान टीम पांचवें दिन 219 रन पर आउट हो गई। शाहीन शाह अफरीदी ने दूसरे टेस्ट मैच में 94 रन देकर 10 विकेट लिए। अफरीदी ने आखिरी दिन चार विकेट लिए और वेस्टइंडीज की टीम 109 रन से मैच हार गई। उनके अलावा नौमान अली ने 3 और हसन अली ने 2 विकेट लिए थे। पहले टेस्ट मैच में वेस्टइंडीज ने पाक के खिलाफ 1 विकेट से जीत हासिल की थी।

श्रीलंका दौरे से पहले साउथ अफ्रीका को लगा झटका

टीम के अंदर चीज से नाखुश असिस्टेंट कोच ने दिया इस्तीफा

नई दिल्ली (एजेंसी)। साउथ अफ्रीका क्रिकेट टीम को श्रीलंका दौरे पर लिमिटेड ओवरों की सीरीज खेलनी है। इस दौरे के लिए रवानगी होने से पहले ही टीम को एक बड़ा झटका लगा है। साउथ अफ्रीका के असिस्टेंट कोच हनोक एनकेवे ने सहायक कोच के पद से इस्तीफा दे दिया है। एनकेवे ने टीम के अंदर काम करने का माहौल और कल्चर से नाखुश होकर अपना पद छोड़ दिया है। ऐसी खबरें आ रही है कि एनकेवे हेड कोच मार्क बाउचर के साथ भी काम करने को लेकर खुश नहीं थे। क्रिकेट साउथ अफ्रीका (सीएसए) ने मंगलवार देर शाम एनकेवे के इस्तीफा देने की जानकारी दी। उनके इस्तीफा देने के बाद टीम को अपने असिस्टेंट कोच के बिना ही श्रीलंका दौरे लिए बुधवार को रवाना होना पड़ा। सीएसए ने एक बयान में कहा है कि बोर्ड ने एनकेवे को रोकने का बहुत प्रयास किया, लेकिन वे नहीं रूके। बयान में कहा गया है कि एनकेवे टीम में कामकाज का वातावरण और संस्कृति के बारे में चिंतित थे। एनकेवे का इस्तीफा दक्षिण अफ्रीकी क्रिकेट में नस्लवाद पर चल रही सुनवाई में किए गए खुलासे के बाद आया है। स्थानीय मीडिया में कहा गया है कि बाउचर के साथ मतभेद के बजाय व्यक्तित्व का मुद्दा था। एनकेवे का आरोप था कि असिस्टेंट कोच होने के नाते उनकी भूमिका को सीमित कर दिया गया था। बाउचर और एनकेवे को 2020 विश्व कप तक कोच और असिस्टेंट कोच बनाया गया था।

साउथ अफ्रीका को श्रीलंका दौरे पर तीन वनडे और तीन मैचों की टी20 सीरीज खेलनी है। सीरीज की शुरुआत दो सितंबर से कोलंबो में होगी। टीम की रवानगी से पहले साउथ अफ्रीका को कप्तान टेम्बा बावुमा ने सोमवार को कहा था कि बाउचर ने अपने खिलाफ लगे आरोपों पर खिलाड़ियों को ठस्पष्टत रूप से जवाब दे दिया है। हालांकि इस बात को लेकर कोई आधिकारिक बयान नहीं आया है कि बाउचर की नौकरी खतरे में है। एनकेवे के इस्तीफे के बाद जारी बयान में कहा गया है कि सीएसए बोर्ड हनोक द्वारा उठाए गए मुद्दों की जांच और समाधान के लिए आवश्यक कदम उठाएगा।

टॉस जीतकर पहले बैटिंग के विराट कोहली के फैसले का स्टुअर्ट ब्रॉड ने उड़ाया मजाक

नई दिल्ली (एजेंसी)। भारत ने हेडिंग्ले टेस्ट में टॉस जीता और इंग्लैंड के खिलाफ पहले बल्लेबाजी का फैसला लिया। विराट कोहली का यह फैसला टीम इंडिया के लिए काल साबित हुआ और पूरी टीम महज 78 रनों पर ऑलआउट हो गई। इंग्लैंड के तेज गेंदबाजों के फैसले की खूब आलोचना भी हो रही है। इंग्लैंड के तेज गेंदबाज स्टुअर्ट ब्रॉड ने भी विराट के इस फैसले को हैरान करने वाला बताया है।ब्रॉड पहले टेस्ट के बाद चोट के चलते इस सीरीज से आउट हो गए, लेकिन सोशल मीडिया के जरिए मैच के अपडेट्स शेयर करते रहते

सामने भारतीय बल्लेबाज एकदम बेबस नजर आए। भारत की ओर से रोहित शर्मा और अजिंक्य रहाणे के अलावा कोई बल्लेबाज दहाई के आंकड़े तक नहीं पहुंच पाया।

रोहित 19 और रहाणे 18 रन बनाकर आउट हुए। विराट के टॉस जीतने के बाद पहले बल्लेबाजी के हैं। विराट के टॉस जीतने के बाद पहले बल्लेबाजी के फैसले को लेकर ब्रॉड ने इंस्टाग्राम स्टोरी में लिखा, 'इंग्लैंड की सुबह। पहले घंटे में तीन विकेट लेना शानदार है। भारत ने टॉस जीतकर पहले बल्लेबाजी करने का साहसिक फैसला लिया है।

रॉयल चैलेंजर्स बैंगलोर ने इंग्लैंड के जॉर्ज गार्टन को शामिल कर पूरा किया विदेशी खिलाड़ियों का कोटा

नई दिल्ली (एजेंसी)। आईपीएल 2021 के दूसरे चरण की तारीख धीरे-धीरे पास आती जा रही है। सभी फ्रेंचाइजी अपनी टीम को मजबूत बनाने के लिए हर सम्भव कोशिश कर रही हैं। इसी लिस्ट में अब विराट कोहली की कप्तानी वाली रॉयल चैलेंजर्स बैंगलोर का नाम भी शामिल हो गया है। सितारों से सजी कोहली की इस टीम से आईपीएल-14 के दूसरे चरण से पहले कई खिलाड़ियों ने अपने नाम वापस ले लिए। आरसीबी की टीम में इसी बीच अपने टीम में कई बदलाव हुए। साइमन कैटिच के कोच का पद छोड़ने के बाद माइक हेसन को टीम का नया कोच नियुक्त किया गया। इसके अलावा उनके पास 8 विदेशी खिलाड़ियों को शामिल करने की जगह बची थी। आरसीबी ने इंग्लैंड के बाएं हाथ के तेज गेंदबाज को टीम में शामिल कर, अंतिम खिलाड़ी को भी शामिल कर लिया। इंग्लैंड के जॉर्ज गार्टन अब आईपीएल में आरसीबी के लिए खेलते हुए नजर आएंगे। बाएं हाथ के इस तेज गेंदबाज को शामिल कर आरसीबी ने अपने विदेशी खिलाड़ियों का कोटा पूरा कर लिया। 24 वर्षीय इस तेज गेंदबाज ने खेले गए 38 टी-20 मुकाबलों में 8.26 की औसत से 44 विकेट चटकाए हैं। ससेक्स के ये गेंदबाज द हंड्रेड के पहले सीजन में सदर्न ब्रेव का हिस्सा थे। इससे पहले आरसीबी के खेमे में कई बदलाव हुए। ऑस्ट्रेलियाई स्पिनर एडम जंपा की जगह पर श्रीलंकाई स्पिनर वानिंदु हसरंगा ने ली। इसके अलावा ऑस्ट्रेलिया के ही डेनियल सैम्स के जगह पर टीम ने श्रीलंका के तेज गेंदबाज दुष्मंथा चमीरा को जगह दी है।

जेम्स एंडरसन ने सचिन तेंदुलकर के इस रिकॉर्ड की बराबरी की, कोहली को आउट करके किया कारनामा

नई दिल्ली (एजेंसी)। भारत ने इंग्लैंड के बीच पांच टेस्ट मैचों की सीरीज का तीसरा टेस्ट आज से हेडिंग्ले (लीड्स) में खेला जा रहा है। इंग्लैंड के अनुभवी तेज गेंदबाज जेम्स एंडरसन ने बुधवार को भारत के पूर्व क्रिकेटर सचिन तेंदुलकर की बराबरी की।

एंडरसन सचिन के साथ एक देश में सबसे ज्यादा टेस्ट खेलने वाले खिलाड़ी बन गए हैं। एंडरसन और सचिन ने एक देश में सर्वाधिक 94 टेस्ट मैच खेले हैं। एंडरसन अब इस मामले में सचिन के साथ संयुक्त तौर पर एक नंबर पर हैं। लीड्स में खेले जा रहे तीसरे टेस्ट की बात करें तो भारतीय कप्तान विराट कोहली ने टॉस जीतकर पहले बैटिंग का फैसला लिया। विराट पहली बार इंग्लैंड की धरती पर टॉस जीते। टीम पहली पारी के पहले ही ओवर में झटका लग गया। पिछले मैच में शतक लगाने वाले केएल राहुल को जेम्स एंडरसन ने शून्य पर पवेलियन भेज दिया। तब इसके बाद एंडरसन ने चेतेश्वर पुजारा और विराट कोहली भी जल्दी आउट किया। कोहली सिर्फ 7 रन बना सके। लंच ब्रेक तक भारत ने 25.5 ओवर में 4 विकेट खोकर 64 रन बना लिए हैं।

एंडरसन ने अब तक 165 टेस्ट खेले हैं। सर्वाधिक टेस्ट मैच खेलने के मामले में वो पांचवें नंबर पर हैं। सचिन 200 टेस्ट के साथ इस सूची में टॉप पर हैं। इसी के साथ एंडरसन ने टेस्ट क्रिकेट में सातवीं बार विराट कोहली को आउट किया। उनके अलावा ऑस्ट्रेलिया के नाथन लॉयन ने टेस्ट क्रिकेट में कोहली को सात बार आउट किया है। कोहली 7 रन पर एंडरसन का शिकार बने। एंडरसन की गेंद पर बॉल कोहली के बल्ले का बाहरी किनारा लेते हुए विकेटकीपर जोस बटलर के पास गई और बटलर ने आसान सा कैच पकड़ लिया। मैच की बात करें तो भारत की पहली पारी 78 रनों पर सिमट गई।

चेतेश्वर पुजारा के जल्दी आउट होने पर भड़के फैंस, बोले- ब्रेक की जरूरत है

नई दिल्ली (एजेंसी)। भारत ने इंग्लैंड के बीच तीसरा टेस्ट आज से हेडिंग्ले (लीड्स) में खेला जा रहा है। चेतेश्वर पुजारा का फ्लॉप शो इस टेस्ट मैच भी जारी रहा। पुजारा एक रन बनाकर पवेलियन लौट गए। पुजारा को जेम्स एंडरसन ने इनस्विंग गेंद पर पुजारा को विकेटकीपर जोस बटलर के हाथों आउट कराया। एंडरसन ने इस सीरीज में तीसरी बार उन्हें अपना शिकार बनाया। पुजारा के जल्द ही आउट होने से फैंस नाराज हो गए और उन्होंने ट्विटर पर जमकर भड़ास निकाली।

एक यूजर ने उन्हें ब्रेक लेने की सलाह दी। एक यूजर ने लिखा कि उन्हें बाकी सीरीज में आराम दे देना चाहिए। गौरतलब है कि पुजारा का इस सीरीज में अब तक बेस्ट स्कोर 45 रहा है, जो उन्होंने लॉर्ड्स टेस्ट में दूसरी पारी में बनाया था। उन्होंने इस सीरीज में 17.75 की औसत से 71 रन बनाए हैं। 33 साल के पुजारा लॉर्ड्स टेस्ट की दूसरी पारी में लय में दिख रहे थे। इसलिए फैंस को उम्मीद थी कि वो लीड्स में अच्छा प्रदर्शन करेंगे। लीड्स में खेले जा रहे तीसरे टेस्ट की बात करें तो भारतीय कप्तान विराट कोहली ने टॉस जीतकर पहले बैटिंग का फैसला लिया। विराट पहली बार इंग्लैंड की धरती पर टॉस जीते। टीम पहली पारी के पहले ही ओवर में झटका लग गया। पिछले मैच में शतक लगाने वाले केएल राहुल को जेम्स एंडरसन ने शून्य पर पवेलियन भेज दिया। तब इसके बाद एंडरसन ने चेतेश्वर पुजारा और विराट कोहली भी जल्दी आउट किया। कोहली सिर्फ 7 रन बना सके। लंच ब्रेक तक भारत ने 25.5 ओवर में 4 विकेट खोकर 64 रन बना लिए हैं।

राजस्थान रॉयल्स की टीम में शामिल हुए नंबर वन टी-20 गेंदबाज तबरेज शम्सी,एंड्रयू टाई की जगह लेंगे

नई दिल्ली (एजेंसी)। आईपीएल फ्रेंचाइजी राजस्थान रॉयल्स ने आईपीएल 2021 के दूसरे फेज के लिए ऑस्ट्रेलिया के तेज गेंदबाज एंड्रयू टाई की जगह साउथ अफ्रीका के तबरेज शम्सी को टीम में शामिल किया है। तबरेज शम्सी टी-20 इंटरनेशनल मं नंबर वन गेंदबाज हैं। ऑस्ट्रेलिया के तेज गेंदबाज एंड्रयू टाई ने परिवार के साथ समय बिताने के लिए आईपीएल 14 से नाम वापसे ले लिया है। आईपीएल 2021 का दूसरे फेज 19 सितंबर से यूएई में शुरू हो रहा है। राजस्थान रॉयल्स ने ट्वीट कर इसकी जानकारी दी। एंड्रयू टाई, जोस बटलर और जोफ्रा आर्चर के साथ शामिल हो गए हैं जो अलग-अलग कारणों से आईपीएल 14 से बाहर हो गए हैं।

बेन स्टोक्स की उपलब्धता पर अभी कुछ स्पष्टता नहीं हैं। उन्होंने मानसिक स्वास्थ को ध्यान में रखते हुए क्रिकेट से अनिश्चितकाल तक ब्रेक लिया है। राजस्थान रॉयल्स को भरोसा है कि इंग्लैंड के स्टार ऑलराउंडर जल्द ही अपनी भागेदारी की पुष्टि करेंगे। 31 साल के शम्सी दक्षिण अफ्रीका के घरेलू क्रिकेट में टाइटन्स का प्रतिनिधित्व करते हैं। तबरेज शम्सी ने साल 2017 में इंग्लैंड के खिलाफ टी-20 सीरीज में साउथ अफ्रीका के लिए इंटरनेशनल क्रिकेट में डेब्यू किया था। बाएं हाथ के लेग स्पिनर ने 39 टी-20इंटरनेशनल में 45 विकेट लिए हैं। 27 वनडे इंटरनेशनल में उन्होंने 32 विकेट लिए हैं। आईपीएल 2016 में शम्सी ने आरसीबी की तरफ से 4 मैच खेले हैं, जिसमें उन्होंने तीन विकेट लिए हैं। 2016 में उन्हें रिप्लेसमेंट प्लेयर के तौर पर टीम में शामिल किया गया था।

तालिबान की हिमाकत मुस्लिम लीग के विधायक को दी जान से मारने की धमकी

नई दिल्ली (एजेंसी)। हिंसा के दम पर अफगानिस्तान पर कब्जा करने वाले तालिबान के नाम पर मुस्लिम लीग के एक वरिष्ठ विधायक को धमकी दी गई है। मुस्लीम लीग के विधायक और केरल के पूर्व मंत्री एम के मुनीर ने दावा किया है कि तालिबान के नाम पर एक चिट्ठी भेज कर उन्हें धमकी दी है कि वो उन्हें और उनके पूरे परिवार को मार डालेगा।

दरअसल हाल ही में विधायक ने सोशल मीडिया पर एक पोस्ट लिखा था। इस पोस्ट में एम के मुनीर ने इस बात का जिक्र किया था कि तालिबान ने अफगानिस्तान के लोगों पर क्रूरता पूर्वव कार्रवाई की है। एम के मुनीर का कहना है कि बुधवार की सुबह उन्हें यह खत मिला। इस खत में कहा गया था कि अगर उन्होंने अपना सोशल मीडिया पोस्ट नहीं हटाया तो उनकी और उनके पूरे परिवार की हत्या कर दी जाएगी। इसमें यह भी कहा

सोशल मीडिया पर पोस्ट लिखने से है नाराज

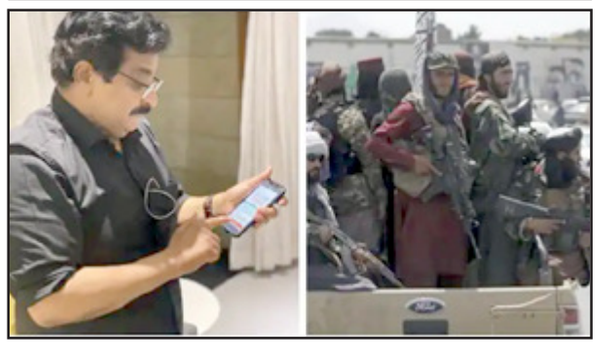

गया है कि मुनीर का यह फेसबुक पोस्ट एंटी-मुस्लिम नजरिये से भरा हुआ है। यह खत सरकारी मेडिकल कॉलेज इलाके से पोस्ट की गई थी। इसमें प्रोफेसर टी जे जोसेफ का भी जिक्र किया गया था जिनपर ईश-निंदा का आरोप लगा साल 2010 में उनके हाथ काट दिये गये थे। एम के मुनीर ने कहा है कि इस मामले में वो थाने में शिकायत दर्ज कराएंगे और जांच की मांग करेंगे। आपको बता दें कि इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग के नेता ने कई एंटी-तालिबान पोस्ट किये थे जिसके बाद सोशल मीडिया के जरिए पर उन पर हमले जारी हैं। आपको बता दें कि अफगानिस्तान से अमेरिकी सैनिकों की वापसी के ऐलान के महज 2 हफ्ते के अंदर तालिबान ने अफगानिस्तान पर कब्जा जमा लिया। तालिबानी लड़ाकुओं ने अफगान पर कब्जे के लिए देश में जबरदस्त हिंसा की। बंदूक की नोंक पर तालिबान ने जिस तरह देश में हिंसा फैलाई उसे पूरी दुनिया ने देखा। 15 अगस्त को इस आतंकी संगठन ने काबुल पर कब्जा कर लिया और अब तालिबान यहां नई सरकार बनाने की कोशिशों में लगा हुआ है।

केरल में कोरोना का कहर!

एक दिन में 31 हजार से ज्यादा नए मामले, 200 से अधिक लोगों की गई जान

नई दिल्ली (एजेंसी)। केरल में कोरोना वायरस चुनौती बन चुका है। राज्य में कोविड-19 के 31,455 नए मामले सामने आये हैं। बुधवार को कुल 215 लोगों की मौत हो चुकी है। केरल में स्वास्थ्य मंत्रालय ने जो आकंड़े जारी किये हैं उससे पता चलता है कि राज्य में संक्रमण कम होने का नाम नहीं ले रहा है। अकेले बुधवार को 31,455 नए मामले सामने आने के बाद चिंता और भी बढ़ गई है। इतना ही नहीं राज्य में कोरोना वायरस के संक्रमण की दर बढ़कर 12 प्रतिशत से भी ऊपर पहुंच गई है। राज्य में कोरोना ने रफ्तार पकड़ ली है तो इस बीच राज्य की स्वास्थ्य मंत्री वीणा जॉर्ज ने विभाग के साथ एक आपात बैठक कर कोविड-19 मरीजों की बढ़ती संख्या की समीक्षा और यथासंभव ज्यादा से ज्यादा लोगों के लिए वैक्सीनेशन सुनिश्चित करने का निर्देश दिया है। बता दें कि केरल सरकार ने सितंबर के आखिरी तक 18 साल से ऊपर के सभी लोगों को कोविड-19 वैक्सीन

की कम से कम एक खुराक लगा देने का लक्ष्य रखा है।

इस बाबत स्वास्थ्य मंत्री ने अधिकारियों को निर्देश दिया है कि वैक्सीनेशन लगाने में देरी से बचने पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उन्होंने कहा है कि सीरिंज की कमी की समस्या का समाधान किया जा रहा है। जॉर्ज ने कहा है कि केंद्र ने राज्य को 1.11 करोड़ वैक्सीन देने का वादा किया है और ऐसे में शीघ्र ही अधिक खुराक उपलब्ध होंगी। आपको बता दें कि राज्य की पिनरई विजयन सरकार की तमाम कवायदों के बावजूद विधानसभा में विपक्ष के नेता वीडी सतीशन ने आरोप लगाया है कि राज्य में कोविड नियंत्रण प्रणाली नाकाम हो गई है और सरकार रोग प्रबंधन के लिए अपनी मौजूदा रणनीतियों और कार्यप्रणाली को दुरुस्त करे। कांग्रेस नेता ने कहा कि आंकड़ों के विश्लेषण की कमी ने दक्षिणी राज्य में अनुसंधान गतिविधियों को भी गंभीर रूप से प्रभावित किया है।

सतीशन ने सरकार पर टीकाकरण पर सिर्फ 29 करोड़ रुपये खर्च करने का आरोप लगाया जबकि 817 करोड़ रुपये टीका चुनौती के जरिए जुटाए गए थे। उन्होंने मांग की कि शेष राशि का इस्तेमाल निजी अस्पतालों में टीको पर सब्सिडी देने के लिए किया जाए। उन्होंने यह भी आग्रह किया कि राज्य सरकार को आरटी-पीसीआर जांच की संख्या बढ़ानी चाहिए क्योंकि एंटीजन टेस्ट विश्वसनीय नहीं है। सतीशन ने कहा कि पहले कहा गया कि केरल का कोविड प्रबंधन अन्य राज्यों की तुलना में प्रभावी है लेकिन अब देश में सबसे ज्यादा मामले केरल से ही आ रहे हैं। उन्होंने दावा किया कि सरकार को समझ नहीं आ रहा है कि कोविड के बढ़ते मामलों को नियंत्रित करने के लिए क्या किया जाए। इससे पहले केरल में मंगलवार को कोरोना वायरस के 24,296 मामले आए थे। यह 26 मई के बाद दूसरी बार है जब मामलों की संख्या 24000 के पार गई है। 26 मई को 28,798 मामले आए थे।

राणे विवाद में अब फ्रंटफुट पर बीजेपी

आजादी के हुए कितने साल, उद्धव को 75 हजार खत भेजकर दिलाएगी याद

मुंबई (एजेंसी)। महाराष्ट्र में नारायण राणे के उद्धव ठाकरे पर विवादित बयान पर छिड़ी रार के बीच बीजेपी ने शिवसेना पर हमला बोला है। बीजेपी के विधायक आशीष शेलार ने बुधवार को कहा, '15 अगस्त के मौके पर सीएम उद्धव ठाकरे यह भूल गए थे कि देश को आजाद हुए कितने साल हो गए हैं। बीजेपी के राज्य प्रमुख चंद्रकांत पाटिल की लीडरशिप में हम 75,000 खत लिखेंगे और सीएम को भेजेंगे। इन खतों के जरिए हम उन्हें याद दिलाएंगे कि आजादी के कितने साल हुए हैं ताकि वे कभी यह बात न भूलें। मुख्यमंत्री को लोगों से इस गलती के लिए माफी मांगनी चाहिए। दरअसल 15 अगस्त को कार्यक्रम के दौरान सीएम उद्धव ठाकरे ने अपने पीछे खड़े एक शख्स से पूछा था कि देश को आजाद हुए कितने साल हुए हैं। इसी का जिक्र करते हुए नारायण राणे ने कहा था कि यदि मैं उस वक्त होता तो उद्धव ठाकरे को थप्पड़ मार देता। उनकी इस टिप्पणी पर संग्राम छिड़ गया था। इसके चलते मंगलवार को राज्य में कई जगहों पर शिवसेना ने प्रदर्शन किया था। यही नहीं कई जगहों पर शिवसैनिकों और बीजेपी के कार्यकर्ताओं के बीच हिंसक झड़प भी हुई थी। यही नहीं मंगलवार की दोपहर को उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया था। हालांकि रात को उन्हें महाड़ की अदालत से जमानत भी मिल गई थी। इस बीच शिवसेना के नेता और मंत्री अनिल परब के एक वीडियो पर विवाद छिड़ गया है। इस वीडियो में वह पुलिस के एक वरिष्ठ अधिकारी को फोन पर आदेश देते दिख रहे हैं कि नारायण राणे को तत्काल फोर्स का इस्तेमाल करके गिरफ्तार करो। इस वीडियो के सामने आने के बाद अब बीजेपी ने उनके खिलाफ अदालत जाने की बात कही है। आशीष शेलार ने कहा, 'नारायण राणे की गिरफ्तारी के पीछे अनिल परब का हाथ था। हम इस मामले की सीबीआई जांच की मांग करते हैं। आखिर महाराष्ट्र की सरकार जन आशीर्वाद यात्रा से इतना घबराई हुई क्यों है। आखिर वे इस तरह से बिहेव क्यों कर रही है।'

कोर्ट के बाहर आत्मदाह की कोशिश करने वाली महिला की मौत

नई दिल्ली (एजेंसी)। सुप्रीम कोर्ट के बाहर आत्मदाह की कोशिश करने वाली महिला की मंगलवार को इलाज के दौरान मौत हो गई. 24 वर्षीय महिला के दोस्त की भी जलने के कारण 21 अगस्त को मौत हो गई थी.16 अगस्त को सुप्रीम कोर्ट के बाहर एक दोस्त के साथ खुद को आग लगाने वाली 24 वर्षीय महिला ने मंगलवार को दम तोड़ दिया. दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक 27 वर्षीय व्यक्ति की शनिवार को इलाज के दौरान मौत हो गई थी. दोनों ने आत्मदाह की कोशिश के पहले फेसबुक लाइव भी किया था. 85 फीसदी से अधिक जली महिला का इलाज दिल्ली के राम मनोहर लोहिया अस्पताल में चल रहा था. महिला ने घोसी से बहुजन समाज पार्टी के सांसद अतुल राय के खिलाफ रेप का आरोप लगाया था. जिला सरकारी वकील (डीजीसी) (अपराधी) प्रयागराज गुलाब चंद्र अग्रहरी के मुताबिक, ठशिकायतकर्ता और उसके पुरुष साथी, जो मुख्य गवाह था, उसकी मौत के बाद दुष्कर्म के मामले में आरोपी के लिए दोषी

ठहराए जाने की संभावना बढ़ गई है क्योंकि दोनों ने एमपी-एमएलए अदालत के समक्ष अपना बयान दर्ज कराया थाठ इस मामले में एमपी-एमएलए कोर्ट में अभियोजन पक्ष की निगरानी कर रहे डीजीसी (अपराधी) ने नैनी जेल में बंद घोसी से बीएसपी सांसद के खिलाफ मामले की वर्तमान स्थिति भी उपलब्ध कराई है. उन्होंने कहा, ठशिकायतकर्ता और उसकी सहेली के अलावा वाराणसी के लंका थाने के पूर्व थाना प्रभारी भारत भूषण तिवारी, जांच अधिकारी और उपनिरीक्षक आरसी पांडेय, प्रधान आरक्षक राघव राय, डॉ रश्मि गुप्ता, आरक्षक प्रीति रावत, अमित श्रीवास्तव और शिव कुमार गौड़ समेत अन्य गवाहों के बयान दर्ज किए जा चुके हैं, जिस अपार्टमेंट में कथित घटना हुई थी, उसके सुरक्षा गार्ड को पहले ही एमपी-एमएलए अदालत में बयान दर्ज किया जा चुका हैठ क्या है आरोप शिकायतकर्ता और उसके साथी ने 16 अगस्त को सुप्रीम कोर्ट के बाहर एसएसपी अमित पाठक और अन्य अधिकारियों पर गंभीर आरोप लगाकर खुद को आग लगा ली थी. महिला और उसके दोस्त जो कि केस का अहम गवाह भी था, ने आरोप लगाया था कि उन्हें केस के बाद प्रताड़ित किया जा रहा है

दोनों सुप्रीम कोर्ट में अपनी बात रखना चाहते थे, लेकिन पहचान पत्र नहीं होने की वजह से अंदर नहीं दाखिल हो पाए थे. इसके बाद सुप्रीम कोर्ट के बाहर खुद को आग लगा ली. इस घटना के बाद यूपी सरकार ने वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों की निगरानी में एक जांच टीम भी गठित की थी और यह टीम इस मामले की जांच के लिए दिल्ली भी आई थी लेकिन महिला और उसके दोस्त दोनों की हालत गंभीर होने की वजह से बयान दर्ज नहीं किए जा सके थे. महिला का बयान दर्ज नहीं हो पाया वहीं उत्तर प्रदेश सरकार ने सुप्रीम कोर्ट के बाहर आत्मदाह करने वाली दुष्कर्म पीड़िता के मामले की जांच के लिए पिछले हफ्ते दो सदस्यीय समिति का गठन किया है, जिसकी अध्यक्षता एक डीजी-रैंक के पुलिस अधिकारी कर रहे हैं. घोसी संसदीय सीट से बीएसपी उम्मीदवार के रूप में नामांकन दाखिल करने वाले अतुल राय ने भगोड़े के रूप में चुनाव जीता और बाद में 22 जून, 2019 को अदालत के सामने आत्मसमर्पण कर दिया और तब से जेल में हैं. पुलिस ने राय के खिलाफ चार्जशीट दाखिल की थी और मामले की सुनवाई प्रयागराज में एमपी-एमएलए कोर्ट में हो रही थी. अतुल राय के भाई पवन कुमार ने नवंबर 2020 में वाराणसी में शिकायत दर्ज कराई थी, जिसमें महिला पर दुष्कर्म की शिकायत से जुड़े दस्तावेजों में उसकी जन्मतिथि जाली होने का आरोप लगाया गया था. इस मामले में वाराणसी की अदालत ने इसी महीने की शुरूआत में महिला और उसके साथी के खिलाफ गैर जमानती वारंट जारी किया था. सांसद के परिवार ने इस घटना के बाद कोई बयान नहीं जारी किया है।

चेनाब पर बन रहे किरू हाइड्रो प्लांट से परेशान हुआ पाकिस्तान, भारत ने दिया जवाब

नई दिल्ली (एजेंसी)। जम्मू-कश्मीर में चेनाब नदी पर बन रहे भारत के किरू हाइड्रोइलेक्ट्रिक प्लांट प्रोजेक्ट ने पाकिस्तान को परेशान कर दिया है। पाकिस्तान ने इस प्रोजेक्ट के डिजाइन को लेकर आपत्ति दर्ज की है। हालांकि, भारत ने एक बार फिर से स्पष्ट कर दिया है कि यह पनबिजली योजना पूरी तरह से सिंधु जल समझौते अनुरूप है। पाकिस्तान ने बीते हफ्ते इस परियोजना के डिजाइन पर आपत्ति जताई है। भारतीय के सिंधु जल आयोग के प्रमुख प्रदीप कुमार सक्सेना ने बताया कि उनके पाकिस्तानी समकक्ष सैयद मोहम्मद मेहर अली शाह ने बीते हफ्ते आपत्ति दर्ज कराई थी। हालांकि, प्रदीप सक्सेना ने इस बात पर जोर दिया कि डिजाइन पूरी तरह से सिधु जल समझौते के प्रावधानों के अनुरूप है। देश में जल संसाधन से जुड़े शीर्ष संगठन सेंट्रल वॉटर कमिशन ने भी इस प्रोजेक्ट को मंजूरी दी है।

सक्सेना ने यह भी कहा कि भारत को अपने अधिकारों के इस्तेमाल का पूरा अधिकार है। उन्होंने कहा कि इस प्रोजेक्ट को लेकर पाकिस्तान की आपत्तियों पर स्थायी सिंधु आयोग की पाकिस्तान में इस साल होने वाली बैठक के दौरान चर्चा की जा सकती है। सिंधु जल समझौते के तहत पाकिस्तान किसी प्रोजेक्ट के डिजाइन को लेकर जानकारी प्राप्त होने के तीन महीने के अंदर आपत्ति दर्ज करा सकता है। पाकिस्तान अक्सर यह आरोप लगाता रहता है कि यह परियोजना 1960 में हुए सिंधु जल समझौते का उल्लंघन करती है। सिंधु जल संधि भारत को पूर्वी नदियों यानी रावी, व्यास और सतलज के पानी पर पूर्ण नियंत्रण देती है, जबकि पाकिस्तान को पश्चिमी नदियों यानी चिनाब, झेलम और सिंधु के पानी को बिना रोके उपयोग करने का अधिकार देती है।

पंजाब में विरोध दरकिनारः नहीं होगा कोई बदलाव, अमरिंदर सिंह की कप्तानी में ही कांग्रेस लड़ेगी चुनाव

चंडीगढ़ नई दिल्ली (एजेंसी)। पंजाब में कांग्रेस संतुलन बनाकर आगे बढ़ने के पक्ष में है। एक तरफ पार्टी ने कांग्रेस के प्रदेश अध्यक्ष का पद नवजोत सिंह सिद्धू को दिया है तो वहीं सीएम के तौर पर कैप्टन अमरिंदर सिंह को ही बनाए रखना चाहती है। हाल ही में राज्य के 4 मंत्रियों की ओर से नेतृत्व परिवर्तन की आवाज पर प्रभारी हरीश रावत ने ऐसे ही संकेत दिए हैं। हरीश रावत ने कहा कि 2022 में होने वाले पंजाब के चुनावों में कांग्रेस का नेतृत्व कैप्टन अमरिंदर सिंह ही करेंगे। उनकी लीडरशिप में ही चुनाव होगा। उन्होंने अपने इस बयान से साफ कर दिया है कि पंजाब

में फिलहाल अमरिंदर सिंह ही कैप्टन रहेंगे और उनके नेतृत्व में ही पार्टी चुनावी समर में जाएगी।

पंजाब के 4 मंत्री और तीन विधायक हरीश रावत से मुलाकात करने के लिए देहरादून पहुंच थे। उसके बाद उनका यह बयान सामने आना कांग्रेस की रणनीति को बताता है। इससे पहले कैप्टन और सिद्धू के बीच मतभेदों को लेकर बातचीत में रावत ने कहा था, 'सिद्धू को प्रदेश अध्यक्ष बनाए जाने के फैसले का कैप्टन अमरिंदर सिंह ने स्वागत किया था। मैं इस मामले के समाधान का प्रयास करूंगा। यदि ऐसा नहीं कर पाता हूं तो फिर कांग्रेस लीडरशिप के समक्ष बात रखूंगा।'

अंखड भारत संदेश के लिए स्वामी श्री योगी सत्यम क्रियायोग आश्रम एवं अनुसंधान संस्थान झूंसी, प्रयागराज 211019 से प्रकाशित एवं रामा प्रिंटिंग प्रेस 53/25/1ए बेली रोड नया कटरा प्रयागराज से मुद्रित।

मुद्रक/प्रकाशक

स्वामी श्री योगी सत्यम पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत समाचारों के चयन के लिए उत्तरदायी। इस समाचार पत्र में प्रकाशित समस्त समाचारों से संबंधित विवादों का न्याय क्षेत्र प्रयागराज होगा। आरएनआई नं. UPHIN 2001/9025

दोनों टीके लगवा चुके भारतीयों को सऊदी अरब ने दी बड़ी राहत, एंट्री पर अब कोई रोक नहीं

नई दिल्ली (एजेंसी)। सऊदी अरब लौटने की योजना बना रहे भारतीयों के लिए राहत भरी ख़बर है। अधिकारियों ने बताया है कि भारतीयों को अब कुछ मानदंडों के तहत किसी तीसरे देश में क्वारंटाइन में रहने को नहीं कहा जाएगा। सऊदी अरब में भारतीय दूतावास ने एक ट्वीट कर बताया, 'सऊदी अधिकारियों ने घोषणा की है कि सऊदी अरब में वैक्सीन की दोनों डोज़ ले चुके भारतीय नागरिक को किसी तीसरे देश में क्वारंटाइन रहने की ज़रूरत नहीं है। भारतीय नागरिक सीधे सऊदी अरब आ सकते हैं। सऊदी अरब में भारतीय राजदूत डॉ औसाफ सईद ने मीडिया से बात करते हुए बताया है कि कहा कि हमें एक सर्कुलर मिला है।

अफगानिस्तान में तालिबान के कब्जे से गदगद पाकिस्तान ने किया जीत का दावा, कहा- हमने भारत को हराया

इस्लामाबाद (एजेंसी)। अफगानिस्तान पर तालिबान के कब्जे से गदगद पाकिस्तान की जुबां पर वह बातें आने लगी हैं, जिनसे दुनिया के सामने उसका असली चेहरा और मकसद उजागर हो रहा है। पड़ोसी मुल्क ने स्वीकार कर लिया है कि तालिबान के हाथ सत्ता लगने से वह इसलिए खुश है क्योंकि उसे लगता है कि अफगानिस्तान की जमीन का इस्तेमाल भारत के खिलाफ कर सकेगा। पाकिस्तान के बड़बोले गृहमंत्री शेख राशिद ने तो पाकिस्तान की जीत और भारत की हार का भी दावा कर दिया है। शेख राशिद ने बुधवार को कहा कि अफगानिस्तान में हुए घटनाक्रम और तालिबान के कब्जे से भारत की असहजा स्पष्ट है। तालिबान के संग आतंक फैलाने को बेताब पाकिस्तान के मंत्री ने यह भी कहा कि पूरी दुनिया ने देखा कि

भारत 'शोक' में हैं। इस्लामाबाद में मीडिया से बात करते हुए राशिद ने कहा कि भारत अफगानिस्तान से अपने नागरिकों को निकाल रहा है और यह हार को दिखाता है। भारत को को अक्सर गीदड़ भभकी देने वाले शेख राशिद ने कहा कि अफगानिस्तान में भारत की 'हार' का क्रेडिट पाकिस्तान और इसकी संस्थाओं को जाता है। राशिद का इशारा घग्घ और पाकिस्तानी सेना की ओर है, जिसपर तालिबान की मदद के आरोप लग रहे हैं। अफगानिस्तान में लोकतांत्रिक सरकार और विदेशी सैनिकों की मौजूदगी से खुद को नुकसान की बात कहते हुए राशिद खान को तालिबानराज से शांति और समृद्धि की उम्मीद है। राशिद ने कहा, ''पाकिस्तान अफगानिस्तान में अव्यवस्था की कीमत सालों से चुका रहा है और शांति स्थापित करना चाहता था, क्योंकि अफगानिस्तान में शांति का मतलब है पाकिस्तान में शांति। दरअसल, पाकिस्तान तालिबान के कब्जे को अपनी जीत इसलिए मानता है क्योंकि पिछले 20 सालों में अफगानिस्तान के विकास में भारत की बड़ी भूमिका थी। पाकिस्तान अफगानिस्तान की जमीन का इस्तेमाल भारत के खिलाफ नहीं कर पा रहा था। अब उसका मानना है कि वह तालिबानी राज में आतंकवाद को बढ़ावा देकर भारत के खिलाफ उनका इस्तेमाल कर पाएगा।

जर्मनी भी अब तालिबान से बातचीत के पक्ष में, एंजेला मर्केल बोलीं- अफगान की सुरक्षा के लिए जरूरी

नई दिल्ली (एजेंसी)। काबुल पर तालिबान के कब्जे के बाद से अफगानिस्तान के हालात बदलते जा रहे हैं। तालिबान ने अमेरिकी सरकार को 31 अगस्त तक अफगानिस्तान नहीं छोड़ने पर नतीजे भुगतने की धमकी दी है। इस सबके बीच जर्मनी की चांसलर एंजेला मर्केल ने कहा है कि तालिबान से बातचीत करनी चाहिए। न्यूज एजेंसी एएफपी की रिपोर्ट मुताबिक मर्केल ने कहा है कि यह अफगानिस्तान की सुरक्षा के लिए हितकारी है कि तालिबान के साथ बातचीत की जाए।मर्केल ने कहा है कि अंतरराष्ट्रीय समुदाय अगर नाटो की तैनाती के दो दशकों के दौरान अफगानिस्तान में किए गए सुधारों की रक्षा करना चाहती है तो हमें तालिबान के साथ बातचीत जारी रखनी चाहिए। हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि पिछले 20 सालों में अफगानिस्तान के संदर्भ में जो चीज़ें हासिल की हैं, उसे हर संभव संरक्षित रखी जाए। तालिबान को लेकर जर्मनी के साथ ही ताजिकिस्तान का बयान भी आया है। ताजिकिस्तान के राष्ट्रपति इमोमाली राखमोन ने तालिबान पर सभी को साथ लेने के अपने वादे को पूरा न करने का आरोप लगाया है। उन्होंने कहा है कि ताजिकिस्तान सरकार ऐसी अफगान सरकार को मान्यता नहीं देगा जो समावेशी नहीं है।